ग्रंथमाळा नंबर ६ ठ्ठो. B.

श्रीमद्विजयानन्दसूरि (आत्मारामजी महाराज)

विरचीत

जैनधर्म विषयिक प्रश्नोत्तर.

छपावी प्रसिद्ध करनार.

श्री जैन आत्मानंद सभा.

भावनगर.

आवृत्ति त्रीजी.

वीर संवत २४३५ आत्म सं. १४ वि. सं. १९६५

भावनगर—धी "विद्या विजय" प्रिन्टींग प्रेसमां
शाह पुरुषोत्तमदास गीगाभाइए छाप्युं.

कींमत आठ आना.



प्रस्तावना.

परोपकारी महात्माओना लेखोनी महत्त्वता अपूर्व होय छे. तेना भोक्ता थवानो आधार तेना ग्राहकना अधिकार उपर रहे छे, एवा अपूर्व लेखोनुं रहस्य आदर पूर्वक अभ्यासथीज प्रगट थाय छे, अने तेनुं आदर पूर्वक श्रवण पठन अने मनन करवाथीज अंते ते फळदायी नीवडे छे.

पवित्र जैन दर्शन जणावे छे के आ जगतमां अनादि कालथीज मिथ्यात्व छे. जे मानवाने आपणने प्रत्यक्षादि कारणो मोजुद छे. आवा मिथ्यात्वना कारणरूप अज्ञानरूपी अंधकारनो नाश करवा परम उपकारी पूज्यपाद गुरू श्री विजयानंदसूरी (आत्मारामजी महाराजे) ए आ जैनधर्म विषयिक प्रश्नोत्तर नामनो ग्रंथ रच्यो छे. आ अने आ सिवायना बीजा आ महात्माए बनावेला ग्रंथो प्रथमथीज प्रशंसनीय थता आव्या छे.

आर्हत धर्मनी जे भावना तेमना मगजमां जन्म पामेली ते लेख रूपे बाहार आववाथी आखी दुनीयाना पंडीतो-ज्ञानीओ धर्म गुरुओ—लेखको अने सामान्य लोको उपर जे असर करे छे तेज तेनी उपयोगीता दर्शाववाने बस छे.

जैनधर्म अनादि कालथीज छे, अने ते बौद्धधर्मथी तद्दन

अलग अने पेहेलाथीज छे, ते तेमज जैनमतना पुस्तकोनी उत्पत्ति—कर्मनुं स्वरुप—जीनप्रतिमानी पूजा करवानो तीर्थंकरोए करेलो उपदेश विगेरे बीजी केटलीक उपयोगी बाबतोनो आ ग्रंथमां समावेश करेलो छे.

वर्तमान कालमां व्यवहारिक केलवणी लीधेला युवको जेने जैनधर्मनुं तत्व शुं छे तेनाथी अजाण छे, तेओने तेमज अन्य धर्मीओने आ ग्रंथ आद्यंत वांचवाथी जैनधर्मनुं छुटुं छुटुं स्वरुप केटलेक अंशे मालम पडे तेम छे.

कोइपण निष्पक्षपाती तत्व जीज्ञासु पुरूष आ ग्रंथनुं स्वरूप आद्यंत अवलोकशेतो एक जैनना महान् विद्वाने भारतवर्षनी जैन प्रजा उपर आवा उत्तम ग्रंथो रची गहन उपकार कीधो छे.ते तेम जणाशे साथे आ विद्वान शिरोमणी महाशय पुरुष सांप्रत काले विद्यमान नथी तेने माटे अतुल खेद प्राप्त थशे.

छेवटे अमारे आनंद सहित जणाववुं पडे छे के मरहुम पूज्यपादना हृदयमां अनगार धर्मनी साथे परोपकारपणानी पवित्र छाया जे पडी हती ते छाया तेमना परिवार मंडलना हृदयमां उतरी छे. पोताना गुरुनुं यथाशक्ति अनुकरण करवाने ते शिष्य वर्ग त्रिकरण शुद्धिथी प्रवर्त्ते छे तेनी साथे विद्या, ऐक्यता स्वार्पण अने परोपकार बुद्धि तेमना शिष्य वर्गमां प-

त्यक्ष मूर्तिमान जोवामां आवे छे अने तेओ परम सात्विक होइ सर्वने तेवांज देखे छे, अने तेवाज करवा इच्छे छे अने तेओनुं जीवन गुरु भक्तिमय छे. आवा केटलाएक गुणोने लइने आवा महान् ग्रंथोने प्रसिद्धिमां लावी जैन समुहमां मूकी जैनधर्मनुं अजवालु पाडवा आ ग्रंथनी बीजी आवृत्ती करवानो समय आव्यो छे. जो के आ ग्रंथनो प्रथम आवृत्ति आजथी वीश वर्ष उपरसंवत् १९४९नी सालमां मरहुम गुरुराजनी संमत्तीथी राजे श्री गीरधरलाल हीराभाइ पालणपुर दरबारी न्यायाधीशे बाहार पाडी हती, परंतु तेनी एक नकल हालमां नहीं मलवाथी ते पूज्यपाद गुरुराजना परिवार मंडलनी आज्ञानुसार तेनी आ बीजी आवृति अमोए बाहार पाडेली छे.

आवा उपयोगी महान् ग्रंथ अमारी सभा तरफथी बहार पडे तेमां अमोने मोटुं मान छे जेथी ते बाबतमां अमोने आज्ञा आपनार ए महान् गुरुराजना परिवार मंडलनो अमो उपकार मानवो आ स्थले भूली जता नथी.

छेवटे आ ग्रंथनी प्रथम आवृत्ति प्रकट करावनार राजेश्री गीरधरलाल हीराभाइए अमारी सभा तरफथी बीजी आवृत्ति

प्रकट करवानी आपेल मान भरेली परवानगी माटे तेओनो पण उपकार मानीए छीए.

आ ग्रंथ छपावतांना दरम्यान कच्छ मोटी खाखरना रेहेनार शेठ रणसीभाइ तेमज रवजीभाइ तथा नेणसीभाइ देवराजे तेनी सारी संख्यामां कोपीओ लेवानी इच्छा जणाववा थी आवा ज्ञान खाताना कार्यना उत्तेजनार्थे आ तेओए करेली मदद माटे अमो तेओने धन्यवाद आपीए छीए अने तेमां रवजीभाइ देवराजे खरीदेल बुको तमाम पोते पोता तरफ थी वगर कीमते आपवाना होवाथी तेमना आवा स्तुती भरेला कार्यने माटे अमोने वधारे आनंद थाय छे.

ग्रंथनी शुद्धता अने निर्दोषता करवानी सावधानी राख्या छतां कदी कोइ स्थले दृष्टी दोषथी के प्रमादथी भूल थयेली मालम पडे तो सुज्ञ पुरुषो सुधारी वांचशो अने अमोने लखी जणावशो तो तेओनो उपकार मानीशुं.



त्रीजी आवृत्तिनी प्रस्तावना

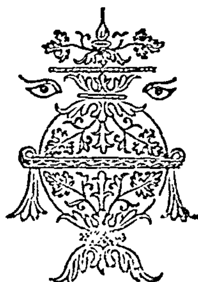
आ ग्रंथनी आ त्रीजी आवृत्ति छे. आ ग्रंथ नानो होवा छतां तेनी उपयोगीता अने महत्वता एटली वधी जणायेली छे के टुंक समयमां तेनी त्रीजी आवृत्ति करवाने सभा भाग्यशाली थइ छे. आ टुंकी मुदतमां ग्रंथनी एक हजार नकल खर्पा जवाथी अने उपरा उपर तेनी मागणीओ आववाथी, सुधारा वधारा साथे सुंदर पाका बाइन्डींगथी आ त्रीजी आवृत्ति करवानो समय प्राप्त थयो छे. आ ग्रंथ एक महान विद्वान समर्थ नररत्न आचार्यमहाराज अने हिंदुस्ताननी जैन कोमना महान उपकारी श्रीमद्विजयानंदसूरि आत्मारामजी महाराज खुदनी कृतिनो होवाथी, ते दिवसानुदिवस वधारे प्रशंसनीय थतो आवतो होवाथी दरेक जैन बंधुओए अवश्य आवा ग्रंथना ग्राहक थइ ज्ञान खाताना कार्यने उत्तेजन आपवुं ए पोतानुं कर्त्तव्य छे.

वीर संवत २४३९
आत्म संवत १४
वी. संवत १९६९
ना बीजा श्रावणशुद
१ आत्मानंदभुवन.

श्री जैन आत्मानंद सभा
भावनगर.

जैन प्रश्नोत्तर.

अनुक्रमणिका.



॥ श्री अर्हं नमः ॥

श्री जैन धर्म विषयिक प्रश्नोत्तर

प्रश्न—जिन और जिनशासन इन दोनो शब्दोंका अर्थ कहादे.

उत्तर—जो राग द्वेष क्रोध मान माया लोभ काम अज्ञान रति अरति शोक हास्य जुगुप्सा अर्थात् घ्रिणा मिथ्यात्व इत्यादि भाव शत्रुओंको जीते तिसको जिन कहते है यह जिन शब्दका अर्थ है. और पूर्वोक्त जिनकी जो शिक्षा अर्थात् उत्सर्गापवादरूप मार्गद्वारा हितकी प्राप्ति अहितका परिहार अंगीकार और त्याग करना तिसका नाम जिनशासन कहते है. तात्पर्य यह है कि जिनके कहे प्रमाण चलना यह जि-

नशासन शब्दका अर्थहै. अभिधान चिंतामणि और अनुयोगद्वार वृत्यादिमेंहै.

प्र. ९—जिनशासनका सार क्याहै.

उ—जिनशासन और द्वादशांग यह एकही के दो नामहै इस वास्ते द्वादशांगका सार आचारंगहै और आचारंगका सार तिसके अर्थका यथार्थ जानना तिस जाननेका सार तिस अर्थका यथार्थ परकों उपदेश करना तिस उपदेशका सार यहकि चारित्र अंगीकार करना अर्थात् प्राणिवध १ मृषावाद २ अदत्तादान ३ मैथुन ४ परिग्रह ५ रात्रिभोजन ६ इनका त्याग करना इसकों चारित्र कहतेहै अथवा चरणसित्तरीके ७० सित्तेर भेद और करण सित्तरिके ७० सित्तेर भेद ये एकसौ चालीस १४० भेद मूलगुण उत्तरगुणरूप अंगीकार करे तिसकों चारित्र कहते है तिस चारित्रका सार

निर्व्वाणहै अर्थात् सर्व कर्मजन्य उपाधिरूप अग्निसें रहित शीतलीभूत होना तिसका नाम निर्व्वाण कहतेहै तिस निर्व्वाणका सार अव्याबाध अर्थात् शारीरिक और मानसिक पीडा रहित सदा सिद्ध मुक्त स्वरूपमे रहना यह पूर्वोक्त सर्व जिनशासनका सारहै यह कथन श्री आचारंगकी निर्युक्तिमेहै.

प्र. ३—तीर्थंकर कौन होतेहैं और किस जगें होतेहै और किस कालमें होतेहै.

उ.—जे जीव तीर्थंकर होनेके उवसें तीसरे भवमें पहिलें वीसस्थानक अर्थात् वीस धर्मके कृत्य करे तिन कृत्योंसे बडा भारी तीर्थंकरनामकर्मरूप पुन्य निकाचित उपार्जन करे तब तहांसे काल करके प्रायें स्वर्ग देवलोकमें उत्पन्न होतेहै तहांसें काल कर मनुष्य क्षेत्रमें वहुत उारी

(रद्धि परिवारवाले उत्तम शुद्ध राज्यकुलमें उत्पन्न होतेहै जेकर पूर्व जन्मसें निकाचित पुन्यसें भोग्य कर्म उपार्जन करा होवे तबतो तिस भोग्य कर्मानुसार राज्य भोगविलास मनोहर भोगतेहै, नही भोगयकर्म उपार्जन करा होवे तब राज्यभोग नही करतेहै. इन तीर्थंकर होनेवाले जीवांको माताके गर्भमेंही तीन ज्ञान अर्थात् मति श्रुति अवधि अवश्यमेवही होतेहै, दीक्षाका समय तीर्थंकरके जीव अपने ज्ञानसेंही जान लेतेहै जेकर माता पिता विद्यमान होवें तबतो तिनकी आज्ञा लेके जेकर माता पिता विद्यमान नही होवें तब अपने भाइ आदि कुटुंबकी आज्ञा लेके दीक्षा लेनेके एक वर्ष पहिले लोकांतिक देवते आकर कहते है हे भगवान्! धर्म तीर्थ प्रवर्त्तावो. तद पीछे एक वर्ष पर्यंत तीनसौ कोटि अठ्यास्सी करोड

अंसीलाख इतनी सोने मोहरें दान देके बडे म-
होत्सवसें दीक्षा स्वयमेव लेतेहै किसिकों गुरु
नही करतेहै क्योंकि वेतो आपही त्रैलोक्यके गुरु
होनेवालेहै और ज्ञानवंतहै तद पीछे सर्व पापके
त्यागी होके महा अद्भुत तप करके घातीकर्म चार
क्षय करके केवली होतेहै. तद पीछे संसार तारक
उपदेश देकर धर्मतीर्थके करनेवाले ऐसे पुरुष
तीर्थंकर होतेहै. उपर कहे हुए वीस धर्मकृत्योंका
स्वरूप संक्षेपसे नीचे लिखतेहै. अरिहंत १ सिद्ध
२ प्रवचन संघ ३ गुरु आचार्य ४ स्थविर ५ व-
हुश्रुत ६ तपस्वी ७ इन सातों पदोंका वात्सल्य
अनुराग करनेसें इन सातोंके यथावस्थित गुण
उत्कीर्तन अनुरूप उपचार करनेसें तीर्थंकर नाम-
कर्म जीव वांधताहै इन पूर्वोक्त सातों अर्हतादि
पदोंका अपने ज्ञानमें वार वार निरंतर स्वरूप

चिंतन करे तो तीर्थंकर नामकर्म बांधे ८ दर्शन सम्यक्त ए विनय ज्ञानादि विषये १० इन दोनोकों निरतिचार पालेतो तीर्थंकर नामकर्म बांधे. जो जो संयमके अवश्य करने योग्य व्यापारहै तिसकों आवश्यक कहतेहै तिसमें अतिचार न लगावे तो तीर्थंकर नामकर्म बांधे ११ मूलगुण पांच महाव्रतमें और उत्तरगुण पिंड विशुद्ध्यादिक ये दोनो निरतिचार पाले तो तीर्थंकर नामकर्म बांधे १२ क्षण लव मूहुर्त्तादि कालमें संवेग भावना शुक्ल ध्यान करनेसें तीर्थंकर नामकर्म बांधताहै १३ उपवासादि तप करनेसें यति साधु जनकों उचित दान देनेसें तीर्थंकर नामकर्म बांधताहै १४ दश प्रकारकी वैयावृत्य करनेसें ती० १५ गुरुआदिकांकों तिनके कार्य करणेसे गुरु आदिकोंके चित्त स्वास्थरूप समाधि उपजावनेसे

ती० १६ अपूर्व अर्थात् नवा नवा ज्ञान पढनेसें ती० १७ श्रुत ज्ञक्ति प्रवचन विपये प्रज्ञावना करनेसें ती० १८ शास्त्रका बहुमान करनेसें ती० १९ यथाशक्ति अर्हदुपदिष्ट मार्गकी देशनादि करके शासनकी प्रज्ञावना करे तो तीर्थंकर नामकर्म बांधेहै २० कोई जीव इन वीसों कृत्योंमे चाहो कोइ एक कृत्यसें तीर्थंकर नामकर्म बांधे है. कोइ दो कृत्यांसे कोइ तीनसे एवं यावत् कोइएक जीव वीस कृत्योंसें बांधेहै यह ज्ञपरका कथन ज्ञाता धर्मकथा १ कल्पसूत्र २ आवश्यकादि शास्त्रोंमेहै. और तीर्थंकर पांच महाविदेह पांच ज्ञरत पांच ऐरवत इन पंदरां क्षेत्रोमें उत्पन्न होते है और इस ज्ञरतखंमर्मे आर्य देश साढे पच्चीसमे उत्पन्न होतेहै वे देश २५॥ साढे पचवीस ऐसेहै.

उत्तर तर्फ हिमालय पर्वत और दक्षिण तर्फ

विंध्याचल पर्वत और पूर्व पश्चिम समुद्रांत तक इसको आर्यावर्त कहते है इसके वीचही साढे-पचवीस देशहै तिनमे तीर्थंकर उत्पन्न होतेहै यह कथन अभिधान चिंतामणि तथा पन्नवणाआदि शास्त्रोमेंहै. अवसर्पिणि कालके ६ आरे अर्थात् ६ हिस्से है तिनमे तीसरे चौथे विभागमे तीर्थंकर उत्पन्न होतेहै और उत्सर्पिणि कालके ६ विभागोमेंसे तीसरे चोथे विभागमे उत्पन्न होतेहै. यह कथन जंबुद्वीप प्रज्ञप्ति आदि शास्त्रोमेंहै.

प्र. ५—तीर्थंकर क्या करतेहै और तीर्थंकरोके गुणोका वरनन करो.

उ.—तीर्थंकर भगवंत वदलेके उपकारकी इछा रहित राजा रंक ब्राह्मण और चंडाल प्रमुख सर्व जातिके योग्य पुरुषांको एकांत हितकारक संसार समुद्रकी तारक धर्मदेशना करतेहै और

तीर्थंकर जगवंतके गुणतो इंद्रादिजी सर्व वरनन नही करसक्तेहै तो फेर मेरे अल्प बुद्धीवालेकी तो क्या शक्तिहै तोजी संक्षेपसे जव्यजीवांके जानने वास्ते थोमासा वरनन करतेहै. अनंत केवल ज्ञान १ अनंत केवल दर्शन २ अनंत चारित्र ३ अनंत तप ४ अनंत वीर्य ५ अनंत पांच लब्धि ६ क्षमा ७ निर्लोजता ८ सरलता ९ निरजिमानता १० लाघवता ११ सत्य १२ संयम १३ निरिछकता १४ ब्रह्मचर्य १५ दया १६ परोपकारता १७ राग द्वेष रहित १८ शत्रु मित्रजाव रहित १९ कनक पथर इन दोनो ऊपर सम जाव २० स्त्री और तृण ऊपर समजाव २१ मांसाहार रहित २२ मदिरा पान रहित २३ अजक्ष्य जक्षण रहित २४ अगम्य गमन रहित २५ करुणा समुद्र २६ सूर २७ वीर २८ धीर २९ अक्षोभ्य ३० परनिंदा रहित ३१

अपनी स्तुति न करे ३१ जो कोइ तिनके साथ विरोध करे तिसकोंभी तारनेकी इच्छावाले ३२ इत्यादि अनंत गुण तीर्थंकर भगवंतोमेंहै सो कोइभी शक्तिमान नहीहै जो सर्व गुण कह सके और लिख सके.

प्र. ५—जैन मतमें जे क्षेत्र महाविदेहादि कहै तहां इहांका कोइ मनुष्य जा सक्ताहै कि नही.

उ.—नही जा सकताहै क्योंकी रस्तेमें वर्फ पाणी जम गयाहै और वडे वडे ऊंचे पर्वत रस्तेमेंहै वडी वडी नदीयां और उजाड जंगल रस्तेमेहै अन्य वहुत विघ्नहै इस वास्ते नही जासक्ताहै.

प्र. ६—भरत क्षेत्र कोनसाहै और कितना लांवा चौडाहै.

उ.—जिसमें हम रहतेहै यही भरतखंडहै इसकी चौडाइ दक्षिणसे उत्तर तक ५२६ कि-

चित् अधिक उत्सेधांगुलके हिसाबसें कोस होतेहै और वैताढ्य पर्वतके पास लंबाइ कुछक अधिक ९०००० नेवु हजार उत्सेधांगुलके हिसाबसें कोस होतेहै चीन रूसादि देश सर्व जैन मतवाले भरत खंमके बीचही मानतेहै यह कथन अनुयोगद्वारकी चूर्णि तथा अंगुल सत्तरी ग्रंथानुसारहै कितनेक आचार्य भरतखंमका प्रमाण अन्यतरेंके योजनोंसें मानतेहै परं अनुयोगद्वारकी चूर्णिकर्त्ता श्री जिनदासगणि क्षमाश्रमणजी तिनके मतकों सिद्धांतका मत नही कहतेहै.

प्र. ७—भरत क्षेत्रमे आजके कालसें पहिला कितने तीर्थंकर हूएहै.

उ.—इस अवसर्पिणि कालमें आज पहिलां चौवीस तीर्थंकर हूएहै जेकर समुच्चय अतीत कालका प्रश्न पूछतेहो तब तो अनंत तीर्थंकर इस

न्नरतखंडमें होगएहै.

प्र. ७—इस अवसर्पिणि कालमे इस न्नरतखंडमें चौवीस तीर्थंकर हूएहै तिनके नाम कहो.

उ.—प्रथम श्री ऋषन्नदेव १ श्री अजितनाथ २ श्री संन्नवनाथ ३ श्री अन्निनंदननाथ ४ श्री सुमतिस्वामी ५ श्री पद्मप्रन्न ६ श्री सुपार्श्वनाथ ७ श्री चंद्रप्रन्न ७ श्री सुविधिनाथ पुष्पदंत ए श्री शीतलनाथ १० श्री श्रेयांसनाथ ११ श्री वासुपूज्य १२ श्री विमलनाथ १३ श्री अनंतनाथ १४ श्री धर्मनाथ १५ श्री शांतिनाथ १६ श्री कुंथुनाथ १७ श्री अरनाथ १७ श्री मल्लिनाथ १ए श्री मुनिसुव्रतस्वामी २० श्री नमिनाथ २१ श्री अरिष्टनेमि २२ श्री पार्श्वनाथ २३ श्री वर्द्धमानस्वामी महावीरजी २४ ये नामहै.

प्र. ए—इन चौवीस तीर्थंकरोंके माता पिताके नाम क्या क्याथे.

७.—नाभि कुलकर पिता श्रीमरुदेवीमाता १ जितशत्रु पिता विजया माता २ जितारि पिता सेना माता ३ संवर पिता सिद्धार्थ माता ४ मेघ पिता मंगला माता ५ धर पिता सुसीमा माता ६ प्रतिष्ट पिता पृथ्वी माता ७ महसेन पिता लक्ष्मणा माता ८ सुग्रीव पिता रामा माता ए दृढरथ पिता नंदामाता १० विश्नु पिता विशुश्री माता ११ वसुपूज्य पिता जया माता १२ कृतवर्म्मा पिता श्यामा माता १३ सिंहसेन पिता सुयशा माता १४ भानु पिता सुव्रता माता १५ विश्वसेन पिता अचिरा माता १६ सूर पिता श्री माता १७ सुदर्शन पिता देवी माता १८ कुंभ पिता प्रभावती माता १ए सुमित्र पिता पद्मावती माता २० विजयसेन पिता वप्रा माता २१ समुद्रविजय पिता शिवा माता २२ अश्वसेन पिता

वामा माता २३ सिद्धार्थ पिता त्रिशला माता २४ ये चौवीस तीर्थंकरोके क्रमसें माता पिताके नाम जान लेने चौवीसही तीर्थंकरोके पिता राजेथे. वीसमा २० और बावीसमा ये दोनो हरिवंश कुलमे उत्पन्न हुएथे और गौतम गोत्री थे शेष २२ बावीस तीर्थंकर ईक्ष्वाकुवंशमें उत्पन्न हुएथे और काश्यप गोत्री थे.

प्र. १०—श्री ऋषभदेवजीसें पहिला इस भरतखंडमे जैन धर्म था के नही.

उ.—श्री ऋषभदेवजीसे पहिला इस अवसर्पिणि कालमें इस भरतखंडमे जैनधर्मादि मतकाभी धर्म नहीथा इस कथनमे जैन शास्त्रही प्रमाणहै.

प्र ११—जेसा धर्म श्रीऋषभदेवस्वामीने चलायाथा तैसाही आज पर्यंत चलाआताहै

वा कुछ फेरफार तिसमें हुआहै.

उ.–श्रीऋषभदेवजीने जैसा धर्म चलायाथा तैसाही श्रीमहावीर भगवंते धर्म चलाया इसमें किंचित्‌मात्रभी फरक नहीहै सोइ धर्म आजकाल जैन मतमें चलताहै.

प्र.१२–श्री महावीरस्वामी किस जगें जन्मेथे और तिनके जन्म हुआंको आज पर्यंत १९४५ संवत तक कितने वर्ष हुएहै.

उ.–श्री महावीरस्वामी क्षत्रियकुंडग्राम नगरमें उत्पन्न हुएथे और आज संवत १९४५तक २४८७ वर्षके लगभग हुएहै विक्रमसें ५४२ वर्ष पहिले चैत्र शुदि १३ मंगलवारकी रात्रि और उत्तराफाल्गुनि नक्षत्रके प्रथम पादमें जन्म हुआथा.

प्र.१३–क्षत्रियकुंडग्राम नगर किस जगेंथा.

उ.–पूर्व देशमें सूबेबिहार अर्थात् बहार ति-

सके पास कुंडलपुरके निजदीक अर्थात् पासहीथा.

प्र. १४—महावीर भगवंत देवानंदा ब्राह्मणीकी कूखमें किस वास्ते उत्पन्न हूये.

उ.—श्रीमहावीर भगवंतके जीवने मरीचीके भवमें अपने उंच्च गोत्र कुलका मद अर्थात् अभिमान कराथा तिस्से नीच गोत्र बांध्याथा सो नीच गोत्रकर्म बहुत भवोंमें भोगना पड़ा तिसमेंसे थोडासा नीच गोत्र भोगना रह गयाथा तिसके प्रभावसें देवानंदाकी कूखमें उत्पन्न हुए और नीच गोत्र भोगा.

प्र. १५—तो फेर जेकर हम लोक अपनी जात और कुलका मद करे तो अच्छा फल होवेगा के नही, मद करना अच्छाहै के नही.

उ.—जेकर कोइभी जीव जातिका १ कुलका २ बलका ३ रूपका ४ तपका ५ ज्ञानका

६ लाभका ७ अपनी ठकुराइका ८ ये आठ प्र-कारका मद करेगा सो जीव घणे भवां तक ये पूर्वोक्त आठही वस्तु अछी नही पावेगा अर्थात् आगेही वस्तु नीच तुछ मिलेंगा इस वास्ते बुद्धिमान पुरुषकों पूर्वोक्त आठही वस्तुका मद करना अछा नहीहै.

प्र.१६—जितने मनुष्य जैनधर्म पालते होवे तिन सर्व मनुष्योंको अपने भाइ समान मानना चाहियेके नही.जेकर भाइ समान मानेतो तिनके साथ खाने पीनेकी कुछ अडचलहै के नही.

उ. जितने मनुष्य जैन धर्म पालते होवे तिन सर्वके साथ अपने भाइ करतांभी अधिक पियार करना चाहियें. यह कथन श्राद्धदिनकृत्य ग्रंथमें है और तिनोंकी जातीयां जेकर लोक व्य-वहार अस्पृश्य न होवें तदा तिनके साथ खाने

पीनेकी जैन शास्त्रानुसार कुछ अड़चल मालुम नही होतीहै क्योंकि जब श्रीमहावीरजीसें ७० वर्ष पीछे और श्रीपार्श्वनाथजीके पीछे छठे पाट श्रीरत्नप्रभसूरिजीनें जब मारवाड़के श्रीमाल नगरसें जिस नगरीका नाम अब भिन्नमाल कहतेहैं तिस नगरसें किसी कारणसें भीमसेन राजेका पुत्र श्रीपुंज तिसका पुत्र उत्पलकुमर तिसका मंत्री ऊहड़ ए दोनो जणे १८ हजार कुटंब सहित निकलके योधपुर जिस जगेहै तिससें वीस कोसके लगभग उत्तर दिशिमे लाखों आदमीयोकी वस्ती रूप उपकेशपट्टन नामक नगर वसाया, तिस नगरमें सवालक्ष आदमीयांकों रत्नप्रभसूरिने श्रावकधर्ममे स्थाप्या तिस समय तिनके अगरह गोत्र स्थापन करे तिनके नाम तातड़ गोत्र १ बापणा गोत्र २ कर्णाट गोत्र ३ वलहरा

गोत्र ४ मोराक्ष गोत्र ५ कुलहट गोत्र ६ विरहट गोत्र ७ श्री श्रीमाल गोत्र ८ श्रेष्टि गोत्र ए सुचिंती गोत्र १० आइचणाग गोत्र ११ भूरि गोत्र भटेवरा १२ भाद्र गोत्र १३ चीचट गोत्र १४ कुंभट गोत्र १५ डिंडु गोत्र १६ कनोज गोत्र १७ लघुश्रेष्टि १८ येह अगरही जैनी होनेसे परस्पर पुत्र पुत्रीका विवाह करने लगे और परस्पर खाने पीने लगे इनमेंसें कितने गोत्रांवाले रजपूतथे और कितने ब्राह्मण और बनियेभी थे इसवास्ते जेकर जैन शास्त्रसें यह काम विरुद्ध होता तो आचार्य महाराज श्रीरत्नप्रभसूरिजी इन सर्वकों एकठे न करते. इसी रीतीसें पीछे पोरवाम हसवालादि देश आगन करे गये है, अन्य कोइ अमचलतो नहीहै परंतु इस कालके वैश्य लोक अपने समान किसी दूसरी जातिवालेको नहीसमझतेहै यह अमचलहै

प्र. १७—जैन धर्म नही पालता होय तिसके साथ तो खाने पीने आदिकका व्यवहार न करे परंतु जो जैन धर्म पालता होवे तिसके साथ उक्त व्यवहार होसके के नही.

उ.—यह व्यवहार करना न करना तो बणिये लोकोंके आधीनहै. और हमारा अभिप्राय तो हम ऊपरके प्रश्नोत्तरमें लिख आएहै.

प्र. १८—जैन धर्म पालने वालोंमें अलग अलग जाति देखनेमें आतीहै ये जैन शास्त्रानुसार हैं के अन्यथाहै और ए जातियों किस वखतमे हूइहै.

उ.—जैन धर्म पालने वाली जातियों शास्त्रानुसारे नही बनीहै, परंतु किसी ग्राम,नगर पुरुष धंधेके अनुसारे प्रचलित हूइ मालम पडती है. श्रीमाल उसवालकातो संवत् उपर लिख आ-

येहै और पोरवाड वंश श्रीहरिभद्रसूरिजीने मे-
वाड देशमें स्थापन करा और तिनका विक्रम
संवत् स्वर्गवास होनेका ५८५ का ग्रंथोंमे लिखाहै
और जैपुरके पास खंडेला गामहै तहां वीरात्
६४३ मे वर्षे जिनसेनआचार्यने ८२ गाम रज-
पूतोंके और दो गाम सोनारोंके एवं सर्व गाम
८४ जैनी करे तिनके चौरासी गोत्र स्थापन करे
सो सर्व खंडेलवाल बनिये जिनकों जैपुरादिक
देशोंमें सरावगी कहतेहै. और संवत् विक्रम २१७
मे हंसारसें दश कोशके फासलेपर अग्रोहा ना-
मक नगरका उजड टेकरा बडा जारीहै तिस
अग्रोहे नगरमें विक्रम संवत् २१७ के लगभग
राजा अग्रके पुत्रांको और नगरवासी कितनेही
हजार लोकांकों लोहाचार्यने जैनी करा, नगर उ-
जड हूआ. पीछे राजभ्रष्ट होनेसें और व्यापार व-

राज करनेसें अग्रवाल वनिये कहलाये. इसी तरे इस कालकी जैनधर्म पालनेवाली सर्व जातियां श्री महावीरसे ७० वर्ष पीछेसें लेके विक्रम संवत् १५७५साल तक जैन जातियों आचार्योंने वनाइहै तिनसें पहिलां चारोही वर्ण जैन धर्म पालतेथे इस समयेकी जातियों नहीथी इस प्रश्नोत्तरमें जो लेख मैने लिखाहै; सो वहुत ग्रंथोमें मैने ऐसा लेख वांचाहै परंतु मैने अपनी मनकल्पनासे नही लिखाहै.

प्र. १९ पूर्वोक्त जातियोंमेंसें एक जातिवाले दूसरी जातिवालोंसें अपनी जातिकों उत्तम मानतेहै और जातिगर्व करतेहै तिनकों क्या फल होवेगा.

उ.—जो अपनी जातिकों उत्तम मानतेहै यह केवल अज्ञानसें रूढी चली हूइ मालम होती है क्योंके परस्पर विवाह पुत्र पुत्रीका करनां और

एक न्यातेंमें एकठे जीमणा और फेर अपने आ-पकों ऊंचा माननां यह अज्ञानता नहीतो दूसरी क्याहै. और जातिका गर्व करनैवाले जन्मांतरमें नीच जाति पावेंगे यह फल होवेगा.

प्र.१०—सर्व जैन धर्म पालनवालीयों वैश्य जातियां एकठी मिल जायें और जात न्यात नाम निकल जावे तो इस काममें जैनशास्त्रकी कुछ मनाइहै वा नही.

उ.—जैन शास्त्रमेंतो जिस कामके करनेसें धर्ममें दूषण लगें सो बातकी मनाइहै. शेषतो लो-कोनें अपनी अपनी रूढीयों मान रखीहै उपरले प्रश्नोमें जब ऊसवाल बनाएथे तब अनेक जा-तियोकी एक जाति बनाइथी इस वास्ते अबभी कोइ सामर्थ पुरुप सर्व जातियोंको एकठी करे तो क्या विरोधहै.

प्र. २१—देवानंदा ब्राह्मणीकी कूखथी त्रिशला क्षत्रियाणीकी कूखमें श्रीमहावीरस्वामीकों किसने और किसतरेंसें हरण किना.

उ—प्रथम देवलोकके इंद्रकी आज्ञासें तिसके सेवक हरिनगमेषी देवतानें संहरण कीना तिसका कारण यहहैकि कदाचित् नीच गोत्रके प्रभावसें तीर्थंकर होने वाला जीव नीच कुलमें उत्पन्न होवे परंतु तिस कुलसें जन्म नही होताहै इस वास्तै अनादि लोक स्थितिके नियमोंसें इंद्र सेवक देवतासें यह काम करवाताहै.

प्र. २२—अपनी शक्तिसें महावीरस्वामी त्रिशलाकी कूखमें क्यों न गये.

उ.—जन्म, मरण, गर्भमें उत्पन्न होनां यह सर्व कर्मके अधीनहै. निकाचित् अवश्य भोगे विना जेन दूर होवे ऐसे कर्मके उदयमे किसीकीभी

शक्ति नही चल सक्तिहै. और जो लोक ईश्वराव-तार देहधारीकों सर्वशक्तिमान् मानतेहै सो निके-वल अपने माने ईश्वरकी महत्वता जनाने वास्ते. जेकर पक्षपात छोडके विचारीये तो जो चाहेसो कर सके ऐसा कोइभी ब्रह्मा, शिव, हरि, क्रायस वगेरे मानुष्योंमे नही हूआहै. इनोंके कर्तव्योंकी इनका पुस्तकें वांचीये तब यथार्थ सर्व शक्ति वि-कल मालुम होजावेंगे. इस कारणसें सर्व जीव अपने करे कर्माधीनहै इस हेतुसे श्रीमहावीर-स्वामी अपनी शक्तिसें त्रिशला माताकी कूखमें नही जासकेहै.

प्र.२३–महावीरस्वामीके कितने नामथे.

उ.–वीर १ चरमतीर्थंकृत २ महावीर ३ वर्द्धमान ४ देवार्य ५ ज्ञातनंदन ६ येह नामहै १ वीर बहुत सूत्रोंमें नामहै १ चरमतीर्थंकृत कल्पादि

सूत्रें १ महावीर ३ वर्द्धमान यहतो प्रसिद्धहै ब-
हुत शास्त्रोमें देवार्य, आवश्यकमें ज्ञातनंदन, ज्ञा-
तपुत्र,आचारंग दशाश्रुतस्कंधेद् ठहों एकठे हेमा-
चार्यकृत् अभिधानचिंतामणि नाममालामेहै.

प्र. १४—श्रीमहावीरस्वामीका बडा भाइ
और तिनकी बहिनका क्या क्या नाम था.

उ.—श्रीमहावीरस्वामीके बडे भाइका नाम
नंदिवर्द्धन और बहिनका नाम सुदर्शना था.

प्र. १५—श्रीमहावीरके उपर तिनके माता
पिताका अत्यंत राग था के नही.

उ.—श्रीमहावीरके उपर तिनके माता पि-
ताका अत्यंत राग था क्योंकि कल्पसूत्रमें लिखा
है कि श्रीमहावीरजीने गर्भमे ऐसा विचार क-
राके हलने चलनेसें मेरी माता दुख पावेहै. इस
वास्ते अपने शरीरकों गर्भमेही हलाना चलाना

बंध करा. तब त्रिशला माताने गर्भके न चलनेसें मनमें ऐसें मानाके मेरा गर्भ चलता हलता नहीहै इस वास्ते गल गया है, तबतो त्रिशला माताने खान, पान, स्नान, राग, रंग, सब छोमके बहुत आर्त्त ध्यान करना शुरु करा, तब सर्व राज्यभवन शोक व्याप्त हुआ. राजा सिद्धार्थभी शोकवंत हुआ. तब श्रीमहावीरजीने अवधिज्ञानसें यह बनाव देखा तब विचार कराके गर्भमे रहे मेरे ऊपर माता पिताका इतना बमा भारी स्नेहहै तो जब मैं इनकी रूबरु दीक्षा लेऊंगा तो मेरे माता पिता अवश्य मेरे वियोगसें मर जाएगे, तब श्रीमहावीरजीने गर्भमेही यह निश्चय कराकि माता पिताके जीवते हुए मैं दीक्षा नही लेवुंगा.

प्र. २६–इन श्रीमहावीरजीका वर्द्धमान नाम किस वास्ते रखा गया.

उ.—जब श्रीमहावीरजी गर्भमें आये तबसें सिद्धार्थराजाकी सप्तांग राज्य लक्ष्मी वृद्धिमान् हुइ, तब माता पिताने विचाराके यह हमारे सर्व वस्तुकी वृद्धि गर्भके प्रभावसें हुइहै. इस वास्ते इस पुत्रका नाम हम वर्द्धमान रखेंगे; भगवंतके जन्म पीछे सर्व ज्ञात वंशीयोकी रूबरु पुत्रका नाम वर्द्धमान रक्खा.

प्र.१७—इनका महावीर नाम किसनें दीना.

उ.—परीषह और उपसर्गसें इनकों भारी मरणांत कष्ट लक हुए तोभी किंचित् मात्र अपना धीर्य और प्रतिज्ञासें नही चलायमान हुए है, इस वास्ते इंद्र, शक्र और भक्त देवतायोंने श्रीमहावीर नाम दीना. यह नाम वहुत प्रसिद्धहै.

प्र. १८—श्रीमहावीरकी स्त्रीका नाम क्या था और वह स्त्री किसकी बेटीथी.

उ.–श्रीमहावीरकी स्त्रीका नाम यशोदा था, और सिद्धार्थ राजाका सामंत समरवीरकी पुत्री थी, जिसका कौन्डिन्य गोत्र था.

प्र. २९–श्रीमहावीरजीने यशोदा स्त्रीके साथ अन्य राज्य कुमारोंकी तरे महिलोंमें भोग विलास कराथा.

उ.-श्री महावीरजीके भोग विलासकी सामग्री महिल बागादि सर्वथी. परंतु महावीरजी तो जन्मसेंही संसारिक भोग विलासोंसे वैराग्यवान् निस्पृह रहते थे; और यशोदा परणी सोभी माता पिताके आग्रहसें और किंचित् पूर्व जन्मोपार्जित भोग्य कर्म निकाचित भोगने वास्ते. अन्यथा तो तिनकी भोग्य भोगनेमे रति नही थी.

प्र. ३०–श्रीमहावीरजीके कोइ संतान हुआ था तिसका नाम क्याथा.

उ.—एक पुत्री हुइथी तिसका नाम प्रिय-दर्शना था.

प्र. ३१—श्रीमहावीरस्वामी अपने पिताके घरसें मूलसें त्यागी वा भोगी रहेथे.

उ.-श्रीमहावीरजी २८ अगवीस वर्ष तक तो भोगी रहे पीछे माता पिता दोनो श्री पार्श्वनाथजी २३ में तीर्थंकरके श्रावक श्राविका थे. वेह महावीरजीकी २८ मे वर्षकी जिंदगीमें स्वर्गवासी हुए पीछे श्री महावीरजीने अपने बडे भाइ राजा नंदिवर्द्धनकों दीक्षा लेनें वास्ते पूछा, तब नंदिवर्द्धनने कहाकी अबहीतो मेरे मातापिता मरेहै और तत्कालही तुम दीक्षा लेनी चाहतेहो यह मेरेकों बडा भारी वियोगका दुख होवेगा, इस वास्ते दो वर्ष तक तुम घरमे मेरे कहनेसे रहो, तब महावीरजी दो वरस तक साधुकी

तरे त्यागी रहे.

प्र.३२--महावीरजीका वेटीका किसके साथ विवाह करा था.

उ.--क्षत्रियकुंडका रहनेवाला कौशिक गोत्रिय जमालि नामा क्षत्रिय कुमारके साथ विवाह करा था.

प्र. ३३--श्रीमहावीरजीकों त्यागी होनेका क्या प्रयोजन था.

उ. सर्व तीर्थंकरोका यही अनादि नियम है कि त्यागी होके केवलज्ञान उत्पन्न करके स्वपरोपकारके वास्तें धर्मोपदेश करनां. तीर्थंकर अपने अवधिज्ञानसे देख लेतेहैकि अब हमारे संसारिक भोग्य कर्म नही रहाहै और अमुक दिन हमारे संसार गृहवास त्यागनेकाहै तिस दिनही त्यागी हो जातेहै. श्रीमहावीरस्वामीकी वाव-

तत्री इसी तरें जाग लेनां.

प्र. ३४—परोपकार करनां यह हरेक मनुष्यकों करनां उचितहै.

उ.—परोपकार करनां यह सर्व मनुष्योंकों करनां उचितहै, धर्मी पुरुषकोंतो अवश्यही करनां उचितहै.

प्र. ३५—श्रीमहावीरजीने किस वस्तुका त्याग करा था.

उ.—सर्व सावद्य योगका अर्थात् जीवहिंसा १ मृषावाद २ अदत्तादान ३ मैथुन स्त्री आदिकका प्रसंग ४ सर्व परिग्रह ५ इत्यादि सर्व पके कृत्य करने करावने अनुमतिका त्याग कराथा.

प्र.३६—श्रीमहावीरजीने अनगारपणा कब लीनाथा और किस जगेमें लीनाथा और कितने वर्षकी उमरमें लीनाथा.

उ—विक्रमसें पहिलें ५१२ वर्ष मगसिर वदी दशमीके दिन पिछले पहरमे उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें विजय मुहूर्त्तमें चंद्रप्रभा शिवकामें बैठके चार प्रकारके देवते और नंदिवर्द्धन राजा प्रमुख हजारों मनुष्योंसें परिवरे हुए नाना प्रकारके वाजिंत्र वजते हुए वडे भारी महोत्सवसें ज्ञात-वनषंड नाम बागमे अशोकवृक्षके हेठे जन्मसें तीस वर्ष व्यतीत हुए दीक्षा लीनीथी. मस्तकके केश अपने हाथसें लुंचन करे और अंदरके क्रोध, मान, माया, लोभका लुंचन करा.

प्र. ३७—श्री महावीरजीकों दीक्षा लेनेसें तुरत ही किस वस्तुकी प्राप्ति हुइथी.

उ.—चौथा मनःपर्यवज्ञान उत्पन्न हुआथा.

प्र. ३८—मनःपर्यवज्ञान भगवंतको गृहस्थावस्थामें क्युं न हुआ.

उ.—मनःपर्यवज्ञान निर्ग्रंथ संयमीकोंही होताहै अन्यको नही,

प्र. ३९—ज्ञान कितने प्रकारकेहै,

उ.—पांच प्रकारके ज्ञानहै.

प्र.४०—तिन पांचो ज्ञानके नाम क्या क्याहै.

उ.—मतिज्ञान १ श्रुतिज्ञान २ अवधिज्ञान ३ मनःपर्यवज्ञान ४ केवलज्ञान ५

प्र. ४१—इन पांचो ज्ञानोंका थोमासा स्वरूप कहो.

उ.—मतिज्ञान विनाही सुनेके जो ज्ञान होवे तथा चार प्रकारकी जो बुद्धिहै सो मतिज्ञानहै. इसके ३३६ तीनसौ छत्तीस नेदहै. जो कहये सुननेमे आवे सो श्रुतिज्ञान है; तिसके १४ चौदह नेदहै. अवधिज्ञान सर्व रूपी वस्तुकों जाने देखे; तिसके ६ नेद है. मनःपर्यवज्ञान अ-

ढाइ द्वीपके अंदर सर्वके मन चिंतित अर्थको जाने देखे. तिसके दोय २ भेदहै. केवलज्ञान भूत, भविष्यत्, वर्त्तमानकालकी वस्तु सूक्ष्म बादर रूपी अरूपी व्यवध्यान रहित व्यवधान सहित दूर नेडे अंदर बाहिर सर्व वस्तुको जाने, देखेहै; इस ज्ञानके भेद नहीहै. इन पांचो ज्ञानोका विशेष स्वरूप देखना होवे तो नंदिसूत्र मलयगिरि वृत्ति सहित वांचना वा सुन लेना.

प्र. ४२—श्रीमहावीरस्वामी अनगार होकर जब चलने लगेथे तब तिनके भाइ राजा नंदिवर्द्धनने जो विलाप कराथा सो थोडासा श्लोकोमें कह दिखलाओ.

उ.—त्वया विना वीर कथं व्रजामो। गृहेऽधुना शून्यवनोपमाने ॥ गोष्ठीसुखं केन सहाचरामो। भोक्ष्यामहे केन सहाथ बंधो ॥१॥

अस्यार्थः ॥ हे वीर तेरे एकलेको छोडके हम सूने बन समान अपने घरमें तेरे विना क्युंकर जावेंगे, अर्थात् तेरे विना हमारे राजमहिलमें हमारा मन जानेको नही करताहै, तथा हे बंधव तेरे विना एकांत बेठके अपने सुख दुःखकी बातां करन रूप गोष्ठी किसके साथ मैं करूंगा तथा हे बंधव तेरे विना म किसके साथ बैठके भोजन जीमुगा; क्योंके तेरे विना अन्य कोइ मेरा त्रिशलाका जाया भाइ नही है १ सर्वेषु कार्येषुच वीर वीरे ॥ त्यामंत्रणादर्शनतस्तवार्य । प्रेमप्रकर्षादभजाम हर्षं निराश्रयाश्चाथ कमाश्रयामः॥२॥ अर्थ॥ हे आर्य उत्तम सब कार्यके विषे वीरवीर ऐसे हम तेरेकों बुलातेथे और हे आर्य तेरे देखनेसे हम बहुत प्रेमसें हर्षकों प्राप्त होतेथे; अब हम निराश्रय होगयेहै, सो किसकों आश्रित

होवे, अर्थात् तेरे विना हम किसकों हे वीर हे वीर कहेंगे और देखके हर्षित होवेंगे ॥१॥ अति-प्रियं बांधव दर्शनं ते ॥ सुधांजनं जाविक दास्मदक्ष्णोः॥ नीरागचित्तोपि कदाचिदस्मान् ॥स्मरिष्यसि प्रौढगुणाभिराम ॥२॥ अस्यार्थः ॥ हे बांधव तेरा दर्शन मेरेकों अधिक प्रियहै, सो तुमारे दर्शन रूप अमृतांजन हमारी आंखोमें फेर कब पडेगा. हे महा गुणवान् वीर तूं निराग चित्तवाला है तोभी कदेक हम प्रिय बंधवांकों स्मरण करेंगा २ इत्यादि विलाप करेथे.

प्र. ४३—श्रीमहावीरस्वामी दीक्षा लेके जब प्रथम विहार करनें लगेथे तिस अवसरमें शक्रइंद्रनें श्रीमहावीरजीकों क्या विनती करीथी.

उ.—शक्रइंद्रने कहा कि हे भगवन् तुमारे पूर्व जन्मोंके वहुत असाता वेदनीयादि कठिन क-

र्मोंके बंधनहै तिनके प्रन्नावसें आपकों उद्मस्थाव-स्थामें बहुत न्नारी उपसर्ग होवेंगे जेकर आपकी अनुमति होवे तो मैं तुमारे साथही साथ रहुं और तुमारे सर्व उपसर्ग टालुं अर्थात् दूर करुं.

प्र. ४४—तब श्रीमहावीरजीने इंद्रको क्या उत्तर दीनाथा.

उ.—तब श्रीमहावीरजीने इंद्रकों ऐसें कहा के हे इंद्र यह बात कदापि अतीत कालमें नही हुइहै अबन्नी नहीहै और अनागत कालमे न्नी नही होवेगी के किसीन्नी देवेंद्र असुरेंद्रादिके साहाय्यसें तीर्थंकर कर्मक्षय करके केवलज्ञान उत्पन्न करतेहै; किंतु सर्व तीर्थंकर अपने २ प्राक्रमसें केवलज्ञान उत्पन्न करतेहै इस वास्ते हमन्नी दूसरेकी साहाय्य विना अपनेही प्राक्रमसें केवलज्ञान उत्पन्न करेंगे.

प्र. ४५—क्या श्रीमहावीरजीकी सेवामें इंद्रादि देवते रहते थे.

उ.—छद्मस्थावस्थामें तो एक सिद्धार्थनामा देवता इंद्रकी आज्ञासें मरणांत कष्ट दूर करने वास्ते सदा साथ रहता था, और इंद्रादि देवते किसि किसि अवसरमें वंदना करने सुखसाता पूछने वास्ते और उपसर्ग निवारण वास्ते आते थे और केवलज्ञान उत्पन्न हूआ पीछे तो सदाही देवते सेवामें हाजर रहतेथे.

प्र. ४६—श्रीमहावीरजीने दीक्षा लीया पीछे क्या नियम धारण कराथा.

उ.—यावत् छद्मस्थ रहुं तावत् कोइ परीषह उपसर्ग मुझकों होवे ते सर्व दीनता रहित अन्य जनकी साहायसें रहित सहन करुं. जिस स्थानमें रहनेसें तिस मकान वालेकों अप्रीति उ-

त्पन्न होवे तो तहां नही रहेनां १; सदाही कार्यो-
त्सर्ग अर्थात् सदा खडा होके दोनो बाहां शरी-
रके अनलगती हुइ हैठकों लांबी करके पगोंमे
चार अंगुल अंतर रखके ओमासा मस्तक नीचा
नमाके एक किसी जीव रहित वस्तु उपर दृष्टि
लगाके खडा रहुंगा २; गृहस्थका विनय नही क-
रुंगा ३; मौन धारके रहुंगा ४; हाथमेही लेके भो-
जन करुंगा, पात्रमे नही ५. ये अभिग्रह नियम
धारण करेथे.

प्र.४७—श्रीमहावीरस्वामीजीने छद्मस्थ का-
लमे कैसे कैसे परीग्रह परीषह उपसर्ग सहन करे
थे तिनका संक्षेपसें बयान करो.

उ. प्रथम उपसर्ग गोवालीयेने करा १ शू-
लपाणिके मंदिरमें रहे तहां शूलपाणी यक्षने उ-
पसर्ग करे ते ऐसे अट्टहासा करके डराया १

हाथीका रूप करके उपसर्ग करा २ सर्पके रूपसें ३ पिशाचके रूपसें ४ उपसर्ग करा. पीछे मस्तकमें १ कानमें २ नाकमें ३ नेत्रोंमें ४ दांतोमें ५ पुंठमें ६ नखसें ७ अन्य सुकुमार अंगोमें ऐसी पीमा कीनी के जेकर सामान्य पुरुष एक अंगमेन्नी एसी पीमा होवे तो तत्काल मरण पावे, परं न्नगवंत नेतो मेरुकी तरें अचल होके अदीन मनसें सहन करे, अंतमे देवता थकके श्री महावीरजीका सेवक वना शांत हूआ. चंमकौशिक सर्पने मंक मारा परं न्नगवंततो मरा नही, सर्प प्रतिवोध हूआ. सुदंष्ट्र नागकुमार देवताका उपसर्ग संवल कंवल देवतायोंने निवारा. न्नगवंत तो कायोत्सर्गमें खमेथे. लोकोंने वनमे अग्नि वालि लोक तो चले गये पीछे अग्नि सूके घासादिकों वालती हूइ न्नगवंतके पगों हेठ आ गइ, तिस्से न्नगवंत

के पग दग्ध हूए, परं भगवंतने तो कायोत्सर्गछोमा नही. तहांही खमे रहे. कटपूतना देवीने माघमासके दिनोंमें सारी रात भगवंतके शरीरकों अत्यंत शीतल जल छांटा, भगवंततो चलायमान नही हुए. अंतमे देवी थकके भगवंतकी स्तुति करने लगी. संगम देवताने एक रात्रिमें वीस उपसर्ग करे वे एसेहै भगवंतके ऊपर धूलिकी वर्षा करी जिस्सें भगवंतके आंख कानादि श्रोत बंद होनेतें स्वासोस्वाससें रहित हो गये तोभी ध्यानसे नही चले १ पीछे वज्रमुखी कीमीयों बनाके भगवंतका शरीर चालनिवत् सछिद्र करा २ वज्र चंचुवाले दंशोने बहु पीमा करी ३ तीक्ष्ण चंचुवाली घीमेल बनके खाया ४ विछु ५ सर्प ६ नउल ७ मूसे ८ के रूपोसें मंक मारा और मांस नोची खाया. हाथी ए हथणी १० बनके सूंम

दांतका घाव करा पग हेठ मर्दन करा तोभी भगवंत वज्ररूपभनाराच नामक संहनन वाले होनेसे नही मरे. पिशाच वनके अट्टहास्य करा ११ सिंह बनके नख दाढायों से विदारचा, फाड्या १२ सिद्धार्थ त्रिशलाका रूप करके पुत्रके स्नेहके विलाप करे १३ स्कंधावारके लोक बनाके भगवंतके पगों ऊपर हांडी रांधी १४ चंडालके रूपसें पंखियोंके पंजरे भगवंतके कान बाहु आदिमे लगाये तिन पक्षीयोंने शरीर नोंचा १५ पीछे खर पवनसें भगवंतकों गेंदकी तरे ऊछाल २ के धरती ऊपर पटका १६ पीछे कलिका पवन करके भगवंतको चक्रकी तरे घुमाया १७ पीछे चक्र मारा जिससें भगवंत जानु तक भूमिमें धस गये १८ पीछे प्रभात विकुर्वी कहने लगा विहार करो. भगवंत तो अवधिज्ञानसें जानतेथे के अबीतो रा-

त्रिहे १९ पीछे देवांगनाका रूप करके हाव भा-
वादि करके उपसर्ग दीना २० इन वीसों उपस-
र्गोंसें जब भगवंत किंचित् मात्रभी नही चले तब
संगमदेवताने ६ मास तक भगवंतके साथ रहके
उपसर्ग करे, अंतमें थकके अपनी प्रतिज्ञासें भ्रष्ट
होके चला गया. अनार्य देशमें भगवंतको बहुत
परीसह उपसर्ग हुए. अंतमे दोनो कानोमें गोवा-
लीयोंने कांसकी सलीयो डाली तिनसें बहुत पीडा
हुइ सो मध्यम पावापुरी नगरीमे खरकवैद्य सि-
द्धार्थ नामा वाणियानें कांसकी सलीयों कानो-
मेंसे काढी भगवंत निरुपक्रमायुवाले थे इससें
उपसर्गोंमे मरे नही, अन्य सामान्य मनुष्यकी
क्या शक्तिहै, जो इतने दुख होनेसें न मरे. वि-
शेष इनका देखना होवे तो आवश्यक सूत्रसें
देख लेना.

प्र. ४७—श्रीमहावीरस्वामीको उपसर्ग हो-

नेका क्या कारण था.

उ.—पूर्व जन्मांतरोमें राज्य करणेसें अत्यंत पाप करे वे सर्व इस जन्ममेंही नष्ट होने चाहिये इस वास्ते असाता वेदनीय कर्म निकाचितनें अपने फल रूप उपसर्गसें कर्म भोग्य कराके दूर होगये, इस वास्ते बहुत उपसर्ग हुए.

प्र. ४९—श्रीमहावीरजीने परीषहे किस वास्ते सहन करे और तप किस वास्ते करा.

उ.—जेकर भगवंत परीषहे न सहन करते और तप न करते तो पूर्वोपार्जित पाप, कर्म, क्षय न होते, तवतो केवलज्ञान और निर्वाण पद ये दोनो न प्राप्त होते इस वास्ते परीषहे उपसर्ग सहन करे, और तपभी करा.

प्र. ५०—श्रीमहावीरजीने छद्मस्थावस्थामें तप कितना करा और भोजन कितने दिन करया.

उ.—इसका स्वरूप नीचले यंत्रसे समझ लेनां.

छ मासी	छ मासी तप १	चार मासी	तीन मासी	अढाइ मास तप	दो मासी तप	डेढ मास तप	मास क्षपण तप	पखवाडीयातप
तप १	पांच दिन न्यू	९	२	२	६	२	१२	७२
भद्र प्रतिमा तप	महा भद्र तप	सर्वतो भद्र तप	छठ तप	अठम तप	सर्व पारणां	दिक्षा दिन	सर्व काल तप ओर पारणा एकत्र करौ	
दिन २	४	१०	२२९	१२	३४९	१	१२ वर्ष मास ६ दिन १५	

प्र. ५१—श्रीमहावीरजीकों दीक्षा लीये पीछे कितने व i गये केवलज्ञान उत्पन्न हुआथा:

उ.—१२ वर्ष ६ मास उपर १५ पंदरा दिन इतने काल गये पीछे केवलज्ञान उत्पन्न हुआथा.

प्र. ५२—श्रीमहावीरजीकों केवलज्ञान कैसी अवस्थामें और किस जगें, उत्पन्न हुआथा:

उ.—वैशाक शुदि १० दशमीके दिन पिछले चौथे पहरमें जृंभिक गाम नगरके बाहिर ऋजुवालुका नामे नदीके कांठे उपर वैयावृत्त नामा व्यंतर देवताके देहरेके पास श्यामाक नामा गृहपतिके खेतमें साल वृक्षके नीचे गाय दोहनेके अवसरमें जैसें पगथलीयोंके भार बैठतेहै तैसें उत्कटिका नाम आसने बैठे आतापना लेनेकी जगें आतापना लेते हुए, तिस दिन दूसरा उपवास छठ भक्त पाणि रहित करा हुआथा. शुक्ल ध्यानके

दूसरे पादमे आरूढ हुआकों केवलज्ञान हुआथा.

प्र. ५३—भगवंतकों जब केवलज्ञान उत्पन्न हुआ था तब तिनकी कैसी अवस्था हुइथी.

उ.—सर्वज्ञ सर्वदर्शी अरिहंत जिन केवली रूप अवस्था हुइथी.

प्र. ५४—भगवंतकी प्रथम देशनासें किसीकों लाभ हुआथा.

उ.—नही ॥ शुनने वालेतो थे, परंतु किसीकों तिस देशनासें गुण नही उत्पन्न हुआ.

प्र. ५५—प्रथम देशना खाली गइ तिस बनावकों जैन शास्त्रमें क्या नाम कहतेहै.

उ.—अछेराभूत अर्थात् आश्चर्यभूत जैन शास्त्रमें इस बनावका नाम कहाहै.

प्र. ५६—अछेरा किसकों कहतेहै.

उ.—जो वस्तु अनंते काल पीछे आश्चर्य-

कारक होवे तिसकों अछेरा कहतेहै, क्योंकि कोइनी तीर्थंकरकी देशना निष्फल नही जातीहै और श्रीमहावीरजीकी देशना निष्फल गइ, इस वास्ते इसको अछेरा कहतेहै.

प्र. ५७–श्रीमहावीरजी तो केवलज्ञानसें जानते थे कि मेरी प्रथम देशनासें किसीकोंनी कुछ गुण नही होवेगा, तो फेर देशना किस वास्ते दीनी.

उ.–सर्व तीर्थंकरोंका यह अनादि नियम है कि जब केवलज्ञान उत्पन्न होवे तब अवश्यही देशना देते है तिस देशनासें अवश्यमेव जीवांकों गुण प्राप्त होताहै, परं श्रीवीरकी प्रथम देशनासें किसीको गुण न हुआ, इस वास्ते अछेरा कहाहै.

प्र. ५८–श्रीमहावीर नगवंते दूसरी देशना किस जगें दीनीथी.

उ.–जिस जगें केवलज्ञान उत्पन्न हुआथा

तिस जगासें ४७ कोसके अंतरे अपापा नामा, नगरी थी, तिससें इशान कोनमे महासेन वन नामे उद्यान था तिस वनमें श्रीमहावीरजी आए, तहां देवतायोंने समवसरण रचा. तिसमें बैठके श्रीमहावीर भगवंते देशना दूसरी दीनी.

प्र. ५ए—दूसरी देशना सुनने वास्ते तहां कोन कोन आये थे और तिस दूसरी देशनामें क्या बमा भारी वनाव वना था और किस किसनें दीक्षा लीनी, और भगवंतके कितने शिष्य साधु हूए, और बमी शिष्यणी कौन हूइ.

उ.—चार प्रकारके देवता और चार प्रकारकी देवी मनुष्य, मनुष्यणी इत्यादि धर्म सुननेकों आये थे.

भगवंतकी देशना सुनके बहुत नर नारी अपापा नगरीमें जाके कहने लगे आजतो हमारी

पुन्यदशा जागी जो हमने सर्वज्ञके दर्शन करे, और तिसकी देशना सुनी हमने तो ऐसी रचनावाला सर्वज्ञ कदेइ देखा नही; यह वात नगरमे विस्तरी तिस अवसरमें तिस अपापा नगरीमें सोमल नामा ब्राह्मणनें यज्ञ करनेका प्रारंभ कर रक्खा था, तिस यज्ञके करानेवाले इग्यारें ब्राह्मणोंके मुख्याचार्य बुलवाये थे, तिनके नामादि सर्व ऐसें थे. इंद्रभूति १ अग्निभूति २ वायुभूति ३ ये तीनो सगे भाइ, गौतम गोत्री, इनका जन्म गाम मगधदेशमें गोर्वरगाम, इनका पिता वसुभूति, माताका नाम पृथिवी, उमर तीनोकी गृहस्थानमें क्रमसे ५० । ४६ । ४२ । वर्षकी इनके विद्यार्थी ५०० पांचसे चतुर्दश विद्याके पारगामी चौथा अव्यक्त नाम १ भारद्वाज गोत्र २ जन्म गाम कोल्लाक सन्निवेश ३ पिताका नाम धनमि-

त्र ४ माता वारुणी नामा ५ गृहवासें जमर ५० वर्षकी ६ विद्यार्थी ५०० सौ ७ विद्या १४ का जान ८. पाचमा सुधर्म नामा १ अग्निवैश्या-यन गोत्री २ जन्म गाम कोल्लाक सन्निवेश ३ पिता धम्मिल ४ भद्दिला माता ५ गृहवास ५० वर्ष ६ विद्यार्थी ५०० सौ ७ विद्या । १४ । ८. छठा मंडिकपुत्र नाम १ वाशिष्ठ गोत्र २ जन्म गाम मौर्य सन्निवेश ३ पिता धनदेव ४ माता विजय-देवा ५ गृहवास ६५ वर्ष ६ विद्यार्थी ३५० सौ ७ विद्या । १४ । ८. सातमा मौर्य पुत्र नाम १ का-श्यप गोत्र २ जन्म गाम मौर्य सन्निवेश ३ पिता मौर्य नाम ४ माता विजयदेवा ५ गृहवास ५३ वर्ष ६ विद्यार्थी ३५० सौ ७ विद्या । १४ । ८. आ-ठमा अकंपित नाम १ गौतम गोत्र २ जन्म गाम मिथिला ३ पिता नाम देव ४ माता जयंती ५ गृ-

हवास ४० वर्ष ६ विद्यार्थी ३०० सौ, विद्या १४। ०. नवमा अचलभ्राता नाम १ गोत्र हारीत २ जन्म गाम कोशला ३ पिता नाम वसु ४ नंदा माता ५ गृहवास ४६ वर्ष ६ विद्यार्थी ३०० सौ, विद्या १४। ०. दसमेका नाम मेतार्य १ गोत्र कौडिन्य २ जन्म गाम कौशला वत्स भूमिमे ३ पिता दत्त ४ माता वरुणदेवा ५ गृहवास ३६ वर्ष ६ विद्यार्थी ३०० तीनसौ ७ विद्या १४। ०. इग्यारमा प्रभास नामा १ गौत्र कौडिन्य २ जन्म राजगृह ३ पिता बल ४ माता अतिभद्रा ५ गृहवास १६ वर्ष ६ विद्यार्थी ३०० सौ ७ विद्या १४ । ०. इस स्वरूप वाले इग्यारे मुख्य ब्राह्मण यज्ञपाडेमें थे तिनोंके कानमें पूर्वोक्त शब्द सर्वज्ञकी महिमाका पडा, तब इंद्रभूति गौतम अभिमानसें सर्वज्ञका मान भंजन करने वास्ते भगवंतके

पास आया। तिनकों देखके आश्चर्यवान् हुआ; तब भगवंतने कहा हे इंद्रभूति गौतम तुं आया, तब गौतम मनमें चिंतने लगा मेरे नाम लेनेसें तो मै सर्वज्ञ नही मानुं, परं मेरे हृदयगत संशय दूर करे तो सर्वज्ञ मानुं. तब भगवंतने तिनके वेद पद और युक्तिसे संशय दूर करा. तब ५०० सौ छात्रा सहित गौतमजीने दीक्षा लीनी, ए बडा शिष्य हुआ. इसी तरे इग्यारेहीके मनके संशय दूर करे और सर्वने दीक्षा लीनी. सर्व ४४०७ सौ इग्यारे अधिक शिष्य हुए. इग्यारोंके मनमें जीवहै के नही १ कर्महैके नही २ जो जीवहै सोइ शरीरहै वा शरीरसे जीव अलग है ३ पांच भूतहै वा नही ४ जैसा इस जन्ममे जीवहै जन्मांतरमें ऐसाही होवेगा के अन्य तरेंका होवेगा ५ मोक्ष है के नही ६ देवते है के नही ७ नारकीहैके नही ८ पुन्य

है के नही ए परलोक है के नही १० मोक्षका उ-पाय है केनही ११. इनके दूर करनेका संपूर्ण कथन विशेषावश्य कमेहै. जिस दिनही चंपाके राजा दधिवाहनकी पुत्री कुमारी ब्रह्मचारणी चंदनबालाने दीक्षा लीनी. यह बडी शिष्यणी हुइ. इसके साथ कितनीही स्त्रीयोंने दीक्षा लीनी. दसरी देशनामे यह बनाव बनाथा.

प्र. ६०—गणधर किसको कहतेहै.

उ.—जिस जीवनें पूर्व जन्ममें शुभ करणी करके गणधर होनेका पुन्य उपार्जन करा होवे सो जीव मनुष्यजन्म लेके तीर्थंकरके साथ दीक्षा लेताहै अथवा तीर्थंकर अर्हतको जब केवलज्ञान होताहै तिनके पास दीक्षा लेताहै, और बडा शिष्य होताहै; तीर्थंकरके मुखसें त्रिपदी सुनके गणधर लब्धिसें चौदहे पूर्व रचताहै और चार ज्ञा-

नका धारक होताहै. तिसकों तीर्थंकर भगवंत गणधर पद देतेहै ओर साधुयोंके समुदायरूप गणकों धारण करता है, तिसकों गणधर कहतेहै.

प्र.६१—श्रीमहावीरजीके कितनेगणधर हुएथे.

उ.—इग्यारे गणधर हुए थे, तिनके नाम उपर लिख आएहै.

प्र. ६२—संघ किसकों कहतेहै.

उ.—साधु १ साध्वी २ श्रावक ३ श्राविका ४ इन चारोंकों संघ कहतेहै.

प्र. ६३—श्रीमहावीर भगवंतके संघमें मुख्य नाम किस किसका था.

उ.—साधुयोंमे इंद्रभूति गौतम स्वामी नाम प्रसिद्ध १ साधवीयोंमें चंपा नगरीके दधिवाहन राजाकी पूत्री साध्वी चंदनबाला २ श्रावकोंमें मुख्य श्रावस्ति नगरीके वसनेवाले संख १ शतक

२ श्राविकायोंमें सुलसा ३ रेवती ४ सुलसा राज-गृहके प्रसेनिजित राजाका सारथी नाग तिसकी न्नार्या; और रेवती मेंढिक ग्रामकी रहनेवाली धनाढ्य गृहपत्नी थी.

प्र. ६४—श्रीमहावीरस्वामीनें किस तरेंका धर्म प्ररूप्या था.

उ.—सम्यक्तपूर्वक साधुका धर्म और श्रावकका धर्म प्ररूप्या था.

प्र. ६५—सम्यक्त पूर्वक किसकों कहतेहै.

उ.—न्नगवंतके कथनकों जो सत्य करके श्रद्धे, तिसकों सम्यक्त कहतेहै, सो कथन यहहै. लोककी अस्तिहै १ अलोकन्नीहै २ जीवन्नीहै ३ अजीवन्नीहै ४ कर्मका बंधन्नीहै ५ कर्मका मोक्षन्नीहै ६ पुन्यन्नी है ७ पापन्नीहै ८ आश्रव कर्मका आवणान्नी जीवमेंहै ए कर्म आवनेके रोकणेका

नुपाय संवरन्नीहै १० करे कर्मका वेदना न्नोगना-
न्नीहै ११ कर्मकी निर्जरान्नीहै कर्म फल देके खि-
रजातेहै १२ अरिहंतन्नीहै १३ चक्रवर्तीभीहै १४
वलदेव वासुदेवन्नीहै १५ नरकन्नीहै १६ नारकी-
न्नीहै १७ तिर्यंचन्नीहै १८ तिर्यंचणीन्नीहै १९
माता पिता रुपीन्नीहै २० देवता और देवलोक-
न्नीहै २१ सिद्धिस्थानन्नी है २२ सिद्धन्नीहै २३
परिनिर्वाणन्नीहै २४ परिनिवृत्तन्नीहै २५ जीवहिं-
सान्नीहै २५ जूठन्नीहै २६ चौरीन्नीहै २७ मैथुन-
न्नीहै २८ परिग्रहन्नीहै २९ क्रोध, मान, माया,
लोन्न, राग, द्वेष, कलह, अन्याख्यान, पैशुन, प-
रनिंदा, माया, मृषा, मिथ्यादर्शन, शल्य येन्नी
सर्व है. इन पूर्वोक्त जीवहिंसासें लेके मिथ्याद-
र्शन पर्यंत अठारह पापोंके प्रतिपक्षी अठारह प्र-
कारके त्यागन्नीहै ३० सर्व अस्तिन्नावको अस्ति-

रूपे और नास्तिनावकों नास्तिरूपें नगवंतने कहाहै ३१ अछे कर्मका अछा फल होताहै बुरे कर्मोका बुरा फल होताहै ३२ पुण्य पाप दोनो संसारावस्थामें जीवके साथ रहतेहै ३३ यह जो निर्ग्रंथोंके वचनहै वे अति उत्तम देवलोक और मोक्षके देने वालेहै ३४ चार काम करनेवाला जीव मरके नरक गतिमें उत्पन्न होताहै. महा हिंसक, क्षेत्र वाडी कर्षण सर सोसादिसें महा जीवांका वध करनेवाला १ महा परिग्रह तृष्णावाला २ मांसका खानेवाला ३ पंचेंद्रिय जीवका मारनेवाला ४ ॥ चार काम करनेवाला मरके तिर्यंच गतिमें उत्पन्न होताहै. माया कपटसें दूसरेके साथ ठगी करे १ अपने करे कपटके ढांकने वास्ते जुठ वोले २ कमती तोल देवे अधिक तोल लेवे ३ गुणवंतके गुण देख सुनके निंदा करे ४ चार काम

करनेसें मनुष्य गतिमें उत्पन्न होताहै. भद्रिक स्व-
भाववाले स्वभावें कुटलितासें रहित होवे १
स्वभावेंहीं विनयवंत होवे २ दयावंत होवे ३ गुण-
वंतके गुण सुनके देखके द्वेष न करे ४॥ चार का-
रणसें देवगतिमें उत्पन्न होताहै; सरागी साधुपणा
पालनेसें १ गृहस्थ धर्म देश विरति पालनेसें २
अज्ञान तप करनेसें ३ अकाम निर्जरासें ४ तथा
जैसी नरक तिर्यंच गतिमें जीव वेदना भोगताहै
और मनुष्यपणा अनित्यहै. व्याधि, जरा, मरण
वेदना करके बहुत भरा हूआहै. इस वास्ते धर्म
करणेमें उद्यम करो. देवलोकमें देवतायोंको मनु-
ष्य करतां बहुत सुखहै. अंतमे सोभी अनित्यहै.
जैसें जीव कर्मोसें बंधाताहै और जैसें जीव क-
र्मोसें छुटके निर्वाण पदकों प्राप्त होताहै. और
षटकायके जीवांका स्वरुप ऐसाहै पीछे साधुका

धर्म और श्रावकके धर्मका यह स्वरूपहै इत्यादि धर्मदेशना श्री महावीर भगवंते सर्वजातिके मनुष्यादिकोंको कथन करीथी.

प्र. ६६–साधुके धर्मका थोमसेमें स्वरूप कह दिखलाउ.

उ. पांच महाव्रत और रात्रि भोजनका त्याग यह ७ वस्तु धारण करे. दश प्रकारका यतिधर्म और सत्तरें भेदे संयम पालन करे; ४२ बैतालीस दोष रहित भिक्षा ग्रहण करे; दशविध चक्रवाल समाचारी पाले.

प्र. ६७ श्रावकधर्मका थोमसेमें स्वरूप कह दिखलाउ.

उ. त्रस जीवकी हिंसाका त्याग १ वमे झुठका त्याग, अर्थात् जिसके बोलनेसे राजसें दंम होवे, और जगतमें झुठ बोलनेवाला प्रसिद्ध

होवे. ऐसें चौरीमेंन्नी जानना ३ बमी चोरीका त्याग ३ परस्त्रीका त्याग ४ परिग्रहका प्रमाण ५ छहें दिशामें जानेका प्रमाण करे. न्नोग परिन्नोगका प्रमाण करे; बावीस अन्नक्ष्य न खाने योग्य वस्तुका ओर बतीस अनंतकायका त्याग करे, और १५ बुरे वाणिज व्यापार करनेका त्याग करे. विना प्रयोजन पाप न करे. सामायिक करे; देशावकाशिक करे; पोषध करे; दान देवे; त्रिकाल देवपूजन करे.

प्र. ६८—साधु श्रावकका धर्म किस वास्ते मनुष्योंको करना चाहिये.

उ.—जन्म मरणादि संसार न्रमणरूप डुखसें बूटने वास्ते साधु और श्रावकका पूर्वोक्त धर्म करना चाहिये.

प्र. ६ए—श्रीन्नगवंत महावीरजीने जो

धर्म कथन कराथा. सो धर्म श्रीमहावीरजीनें अपने हाथोंसे किसी पुस्तकमें लिखा था वा नही.

उ.—नही लिखाथा.

प्र. ७० श्रीमहावीर भगवंतका कथन करा हुआ सर्व उपदेश भगवंतकी रूबरु किसी दूसरे पुरुषनें लिखाथा.

उ.—दूसरे किसी पुरुषने सर्व नही लिखाथा.

प्र. ७१—क्या लिखने लोक नही जानते थे, इस वास्तें नही लिखा वा अन्य कोइ कारण था.

उ.—लिखनेतो जानते थे, परं सर्व ज्ञान लिखनेकी शक्ति किसीभी पुरुषमें नही थी, क्योंकें भगवंतनें जितना ज्ञानमें देखा था तिसके अनंतमें भागका स्वरूप वचनद्वारा कहा था. जितना कथन करा था तिसके अनंतमें भाग

प्रमाण गणधरोने द्वादशांग सूत्रमें ग्रंथन करा, जेकर कोइ १२ बारमें अंग दृष्टिवादका तीसरा पूर्व नामा एक अध्ययन लिखे तो १६३८३ सोलांहजार तीन सौ त्र्याशी हाथीयों जितने स्याहीके ढेर लिखनेमें लगें, तो फेर संपूर्ण द्वादशांग लिखनेकी किसमे शक्ति हो सक्तीहै, और जब तीर्थंकर गणधरादि चौदह पूर्वधारी विद्यमानथे, तिनके आगे लिखनेका कुछभी प्रयोजन नहीथा, और देशमात्र ज्ञान किसि साधु, श्रावकने प्रकरण रूप लिख लीया होवे, अपने पठन करने वास्ते ,तो निषेध नही.

प्र. ७१—पूर्वोक्त जैनमतके सर्व पुस्तक श्रीमहावीरसें और विक्रम संवत्की शुरुयातसें कितने वर्ष पीछे लिखे गये है.

उ.—श्रीमहावीरजीसें ९८० नवसौ अ-

इसी वर्ष पीछे और विक्रम संवत् ५१० में लिखे गये है.

प्र ७३–इन शास्त्रोंके कंठ और लिखनेमें क्या व्यवस्था बनी थी, और यह पुस्तक किस जगे कितने किस रीतीसे कितने लिखेथे.

उ.–श्री महावीरजीसें १७० वर्षतक श्री भद्रबाहुस्वामी यावत् (द्वादशांग) चौदह पूर्व और इग्यारे अंग जैसें सुधर्मस्वामीने पाठ ग्रंथन करा था तैसाही था, परं भद्रबाहुस्वामीने बारां १२ चौमासे निरंतर नैपाल देशमें करे थे, तिस समयमें हिंदुस्थानमें बारां वर्षका काल पमाथा, तिसमें भिक्षा ना मिलनेसें एक भद्रबाहुस्वामी-कों वर्जके सर्व साधुयोंके कंठसें सर्व शास्त्र बीच बीचसें कितनेही स्थल विस्मृत हो गये, जब बारां वरसका काल दुर हूआ, तब सर्व आचार्य

साधु पाटलिपुत्र नगरमें एकठे हुए, सर्व शास्त्र आपसमें मिलान करे तब इग्यारे अंग तो संपूर्ण हुए, परंतु चौदह पूर्व सर्व सर्वथा भूल गए, तब संघकी आज्ञासें स्थुलभद्रादि ५०० सौ तीक्ष्ण बुद्धिवाले साधु नैपाल देशमें श्री भद्रबाहुस्वामीके पास चौदह पर्व सीखने वास्ते गये, परंतु एक स्थुलभद्रस्वामीने दो वस्तु न्यून दश पूर्व पाठार्थसें सीखे. शेष चार पूर्व केवल पाठ मात्र सीखे. श्री भद्रबाहुके पाट ऊपर श्री स्थुलभद्रस्वामी बैठे, तिनके शिष्य आर्यमहागिरि सुहस्तिसे लेके श्री वज्रस्वामी तक जो वज्रस्वामी श्री महावीरसें पीछे ५८४ में वर्ष विक्रम संवत् ११४ में स्वर्गवासी हुए है तहां तक येह आचार्य दश पूर्व और इग्यारे अंगके कंठ्याग्र ज्ञानवाले रहे, तिनके नाम आर्यमहागिरि १ आर्यसुहस्ति २ श्री

गुणसुंदरसूरि ३ श्यामाचार्य ४ स्कंधिलाचार्य ५ रेवतीमीत्र ६ श्री धर्मसूरि ७ श्री भद्रगुप्त ८ श्री गुप्त ९ वज्रस्वामी १० श्री वज्रस्वामीके समीपे तोसलिपुत्र आचार्यका शिष्य श्री आर्यरक्षित-सूरिजीनें साडे नव पूर्व पाठार्थसें पठन करे. श्री आर्यरक्षितसूरि तक सर्व सूत्रोंके पाठ उपर चारोही अनुयोगकी व्याख्या अर्थात् जिस श्लोकमें चरणकरणानुयोगकी व्याख्या जिन अक्षरोंसे करतेथे तिसही श्लोकके अक्षरोंसे द्रव्यानुयोगकी व्याख्या और धर्मकथानुयोगकी और गणितानुयोगकी व्याख्या करते थे. इसतरें अर्थ करणेकी रीती श्री सुधर्मस्वामीसे लेके श्री आर्यरक्षितसूरि तक रही, तिनके मुख्य शिष्य दुर्बलिका पुष्पादिकी बुद्धि जब चारतरेंके अर्थ समझनेमें गभराइ तब श्री आर्यरक्षितसूरिजीने मनमें वि-

चार करा के इन नव पुर्वधारीयोंकी बुद्धिमें जब चार तरेंका अर्थ याद रखना कठिन पमता है. तो अन्य जीव अल्प बुद्धिवाले चार तरेंका सर्व शास्त्रोंका अर्थ क्युं कर याद रखेंगे, इस वास्ते सर्व शास्त्रोंके पाठोंका अर्थ एकैक अनुयोगकी व्याख्या शिष्य प्रशिष्योंकों सिखाइ. शेष व्यवछेद करी सोइ व्याख्या जैन श्वेतांबर मतमे आचार्योंकी अविछिन्न परंपरायसे आज तक चलती है, तिनके पीछे स्कंधिलाचार्य श्री महावीरजीके २४ मे पाट हुए है. नंदीसूत्रकी वृत्तिमें श्री मलयगिरि आचार्यें ऐसा लिखाहै कि श्री स्कंधिलाचार्यके समयमे बारां वर्ष १२ का डुर्भिक्ष काल पमा, तिसमें साधुयोंको भिक्षा न मिलनेसें नवीन पढना और पिछला स्मरण करना बिलकुल जाता रहा. और जो चमत्कारी अतिशयवंत शास्त्र थे वेभी

वहुत नष्ट हो गये. और अंगोपांगभी न्नावसें अर्थात् जैसे स्वरूपवाले थे तैसे नही रहे. स्मरण परावर्त्तनके अन्नावसें जव वारां वर्षका डुर्निक्ष काल गया और सुनिक्ष हूआ, तव मथुरा नगरीमें स्कंधिलाचार्य प्रमुख श्रमणसंघने एकठे होके जो पाठ जितना जिस साधुके जिस शास्त्रका कंठ याद रहा सो सर्व एकत्र करके कालिक श्रुत अंगादि और कितनाक पूर्वगत श्रुत किंचिन्मात्र रहा हुआ जोम्के अंगादि घटन करें, इस वास्ते इसकों माथुरी वाचना कहते है. कितनेक आचार्य ऐसें कहतेहे १२ वर्षके कालके वसें एक स्कंधिलाचार्यकों वर्जके शेष सर्वाचार्य मर गये थे. गीतार्थ अन्य कोइन्नी नही रहा था, परं सर्व शास्त्र नूले तो नही थे; परंतु तिस कालमें इतनाही कंठ था, शेष अल्प वुद्धिके प्रन्ना-

वसें पहिलांही भूल गया था, तिस स्कंधिला-चार्यके पीछे आठमें पाट और श्री वीरसें ३१ में पाट देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण हुए, तिनका वृत्तांत ऐसें जैन ग्रंथोमे लिखा है. सोरठ देशसें वेला-कूलपत्तनमें अरिदमन नामे राजा, तिसका सेव-क काश्यप गोत्रीय कामर्द्धि नाम क्षत्रिय, तिस-की भार्या कलावती, तिनका पुत्र देवर्द्धिनामे, तिसने लोहित्य नामा आचार्यके पास दीक्षा ली नी, इग्यारे अंग और पूर्वगत ज्ञान जितना अ-पने गुरुकों आताथा, तितना पढ लिया, पीछे श्री पार्श्वनाथ अर्हंतकी पट्टावलिमे प्रदेशी राजाका प्रतिबोधक श्री केशी गणधरके पट्ट परंपरायमें श्री देवगुप्तसूरिके पासों प्रथम पूर्व पठन करा, अर्थसें, दूसरे पूर्वका मूल पाठ पढते हुए श्री दे-वगुप्तसूरि काल कर गये, पीछे गुरुने अपने पट्ट

ऊपर स्थापन करा. एक गुरुने गणिपद दीना, दूसरेने क्षमाश्रमणपद दीना, तब देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण नाम प्रसिद्ध हुआ. तिस समयमें जैन मतके ५०० पांचसौ आचार्य विद्यमान थे, तिन सर्वमें देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण युगप्रधान और मुख्याचार्य थे, वे एकदा समय श्री शत्रुंजय तीर्थमें वज्रस्वामीकी प्रतिष्ठा हुइ. श्री ऋषभदेवकी पितलमय प्रतिमाकों नमस्कार करके कपर्दि यक्षकी आराधना करते हुए; तब कपर्दि यक्ष प्रगट होके कहने लगा, हे भगवान्, मेरे स्मरण करनेका क्या प्रयोजन है. तब देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणजीने कहा, एक जिनशासनका काम है, सो यह है कि बार वर्षी डुकालके गये, श्री स्कंदिलाचार्यने माथुरी वाचना करी है; तोभी कालके प्रभावसें साधुयोंकी मंद बुद्धिके होनेसें शास्त्र कं-

उसें भूलते जातेहै. कालांतरमें सर्व भूल जावेंगे. इस वास्ते तुम साहाय्य करो. जिस्सें मै ताड़-पत्रो उपर सर्व पुस्तकोंका लेख करुं; जिससें जैन शास्त्रकी रक्षा होवे. जो मंदबुद्धिवालाभी होवेगा सोभी पत्रों उपर शास्त्राध्ययन कर सकेगा, तब देवतानें कहा मैं सानिध्य करुंगा, परंतु सर्व साधुयोंकों एकठे करो और स्याही ताड़पत्र बहुत संचित करो, लिखारियोंको बुलाओ; और साधारण द्रव्य श्रावकोंसें एकठा करावो; तब श्री देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणनें पूर्वोक्त सर्व काम वल्लभी नगरीमें करा, तब पांचसो आचार्य और वृद्ध गीतार्थोनें सर्वांगोपांगादिकोंके आलापक साधु लेखकोंनें लिखे, खरड़ा रुपसें; पीछे देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणजीने सर्व अंगोपांगोके आलापक जोड़के पुस्तकरूप करे. परस्पर सूत्रोंका भुलावना

जैसें ज्ञगवतीमे जहा पन्नवणाए इत्यादि अति देशकरे सर्व शास्त्र शुद्धकरके लिखवाए. देवताकी सानिध्यतासें एक वर्षमें एक कोटी पुस्तक १०००००००० लिखे आचारंगका महाप्रज्ञा अध्ययन किसी कारणसें न लिखा, परं देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणजी प्रमुख कोइज्ञी आचार्यने अपनीमनकल्पनासें कुठज्ञी नही लेखाहै. इस वास्ते जैन शास्त्र सर्व सत्य कर मानने चाहिये ॥ जो कोइ कोइ कथन समऊमें नही आताहै, सो यथार्थ गुरु गम्यके अज्ञावसें; परं गणधरोके कथनमें किंचित् मात्रज्ञी ज्रूल नहीहै. और जो कुछ किसी आचार्यके ज्रूल जानेसें अन्यथा लिखाज्ञी गया होवै तो ज्ञी अतिशय ज्ञानी विना कोन सुधार सके; इस वास्ते तदमेव सच्चं जं जिणेहिं पन्नत्तं, इस पाठके अनुयायी रहना चाहिये.

प्र. ७४–जैन मतमै जिसकों सिद्धांत तथा आगम कहते है, वै कौनसे कौनसे है. और तिनके मूल पाठ १ निर्युक्ति २ भाष्य ३ चूर्णि ४ टीका ५ के कितने कितने ३२ बत्तीस अक्षर प्रमाण श्लोक संख्याहै, यह संक्षेपसें कहो.

उ.–इस कालमें किसी रूढिके सबबसें ४५ पैंतालीस आगम कहै जातेहैं, तिनके नाम और पंचांगीके श्लोक प्रमाण आगे लिखे हुए, यंत्रसें जान लेने. और इनमें विषय विधेय इस तरेका है. आचारंगमें मूल जैन मतका स्वरूप, और साधुका आचारका कथन है.१ सूयगडांगमे तीनसौ ३६३ त्रेसठ मतका स्वरूप कथनादि विचित्र प्रकारका कथन है.२ ठाणांगमें एकसें लेके दश पर्यंत जे जे वस्तुयो जगतमें है तिनका कथन है. ३ समवायांगमें एकसें लेके कोटाकोटि

पर्यंत जे पदार्थ है तिनका कथन है ४ भगवतीमें गौतमस्वामीके करे हुए विचित्र प्रकारके ३६००० छत्तीस हजार प्रश्नोंके उत्तर है. ५ ज्ञातामें धर्मी पुरुषोंकी कथा है. ६ उपाशक दशामें श्री महावीरके आनंदादि दश श्रावकोंके स्वरूपका कथन है. ७ अंतगडमें मोक्ष गये ९० नवे जीवांका कथन है. ८ अणूत्तरोववाइमें जे साधु पांच अनुत्तर विमानमे उत्पन्न हुएहे, तिनका कथन है.९ प्रश्नव्याकरणमें हिंसा १ मृषावाद २ चौरी ३ मैथुन ४ परिग्रह ५ इन पांचो पापांका कथन और अहिंसा १, सत्य २, अचौरी ३, ब्रह्मचर्य ४ परिग्रह त्याग ५ इन पांचो संवरोका स्वरूप कथन कराहे. १० विपाक सूत्रमें दश दुख विपाकी और दश सुख विपाकी जीवांके स्वरूपका कथन है. ११ इति संक्षेपसें अंगाभिधेय उववाइमें १२

वावीस प्रकारके जीव काल करके जिस जिस जगें उत्पन्न होते है तिनका कथनादि, कोणककी वंदनाविधि महावीरकी धर्मदेशनादिका कथन है. १ राजप्रश्नीयमें प्रदेशी राजा नास्तिक मती-का प्रतिबोधक केशी गणधरका और देव विमा-नादिकका कथन है. २ जीवाभीगममें जीव अ-जीवका विस्तारसें चमत्कारी कथन करा है. ३ पन्नवणामें ३६ छत्तीस पदमे छत्तीस वस्तुका वहुत विस्तारसें कथन है. ४ जंबुद्वीप पन्नतिमें जंबुद्वी-पादिका कथन है. ५ चंद्रप्रज्ञप्ति, सूर्यप्रज्ञप्तिमें ज्योतिष चक्रके स्वरूपका कथन है. ६, ७ निरा-वलिकामें कितनेक नरक स्वर्ग जानेवाले जीव और राजायोंकी लमाइ आदिकका कथन है. ८। ९। १०। ११ ॥ १२ आवश्यकमें चमत्कारी अति सूक्ष्म पदार्थ नय निक्षेप ज्ञान इतिहासादिका क-

थन है, १, दशवैकालिकमें साधुके आचारका कथन है २ पिंडनिर्युक्तिमें साधुके शुद्धाहारादिकके स्वरूपका कथन है ३ उत्तराध्ययनमें तो छत्तीस अध्ययनोंमें विचित्र प्रकारका कथन करा है ४ छहों छेद ग्रंथोमें पद विभाग समाचारी प्रायश्चित्त आदिका कथन है ६ नंदीमे ५ पांच ज्ञानका कथन करा है. १ अनुयोगद्धारमें सामायिकके उपर चार अनुयोगद्वारोंसें व्याख्या करीहै २ चउसरणमें चारसरणेका अधिकार है १, रोगीके प्रत्याख्यान की विधि २, अनशन करणेकी विधि ३, वडे प्रत्याख्यानके करणेका स्वरूप ४ गर्भादिका स्वरूप ५, चंद्र वेध्यका स्वरूप ६, ज्योतिषका कथन ७, मरणके समय समाधिकी रीतिका कथन ८ इंद्रोके स्वरूपका कथन ९, गछाचारमें गछका स्वरूप, १० और संस्थारपइन्नेमें संथारेकी महि-

माका कथनहै, यह संक्षेपसें पैंतालीस आगममें जो कुछ कथन करा है, तिसका स्वरूप कहा, परंतु यह नही समझ लेनाके जैन मतमें इतनेही शास्त्र प्रमाणिक है, अन्य नही; क्योंकि उमास्वाति आचार्यके रचे हुए, ५०० प्रकरण है, और श्री महावीर भगवंतका शिष्य श्री धर्मदास गणि क्षमाश्रमणजीकी रची हुइ उपदेशमाला तथा श्री हरिभद्रसूरिजीकेरचे १४४४ चौदहसौ चौवालीस शास्त्र इत्यादि प्रमाणिक पूर्वधरादि आचार्योंके प्रकृति शतकादि हजारोही शास्त्र विद्यमान है, वे सर्व प्रमाणिक आगम तुल्य है, राजा शिवप्रसादजीनें अपने बनाए इतिहास तिमर नासकमें लिखा है. बुलरसाहिबन १५०००० डेढ लाख जैन मतके पुस्तकोंका पता लगाया है; और यहभी मनमें कुविकल्प न करनाके यह

शास्त्र गणधरोंके कथन करे हुए है, इस वास्ते सच्चे है, अन्य सच्चे नही, क्योंके सुधर्मस्वामीने जेसे अंग रचेथे वैसेतो नही रहेहै. संप्रति कालके अंगादि सर्व शास्त्र स्कंधिलादि आचार्योंने वांचनारूप सिद्धांत बांधेहै, इस वास्ते पूर्वोक्त आग्रह न करना, सर्व प्रमाणिक आचार्योंके रचे प्रकरण सत्य करके मानने, यही कल्याणका हेतु है.

अंक.	सूत्र नामानि.	सूत्र मूल संख्या.	निर्युक्तिः	भाष्यं.	चूर्णिः	टीका.	सर्व संख्या.
	अथांगानि.						
१	आचारांग सूत्रं	२५००	४५०	०	८३००	१२०००	२३२५०
२	सूयगडांग सूत्रं.	२१००	२५०	०	१००००	१२८५०	२५२००
३	ठाणंग सूत्रं.	३७७५	०	०	०	१५२५०	१९०२५
४	समवायांग सूत्रं.	१६६७	०	०	४००	३७७६	५८४३
५	भगवती सूत्रं.	१५७५२	०	०	४०००	१८६१६	३८३६८
६	ज्ञाता धर्मकथा सूत्रं.	६०००	०	०	०	४२५२	१०२५२

७	उपाशकदशांग सूत्रं.	८१२	०	०	०		
८	अंतगड सूत्रं.	७९०	०	०	०	१३००	३०१४
९	अनुत्तरोववाइ सूत्रं.	१९२	०	०	०		
१०	प्रश्नव्याकरण सूत्रं.	११५०	०	०	०	४६००	५८५०
११	विपाक श्रुतांग सूत्रं.	१२१६	०	०	०	९००	२११६

अथोपांगानि.

१ ११	ववाइ सूत्रं.	११६७	०	०	०	३१२५	४२९२
२ १२	राजप्रश्नीय सूत्रं.	२०७८	०	०	०	६०००	८०७८

३ १४	जीवाभिगम सूत्रं.	४७००	०	०	१५००	१३००० टिप्पन ११००	२०३००
४ १५	पन्नवणा सूत्रं.	७८००	०	०	०	लघु ३७२८ बृहत् १४००	२५५२८
६ १६	जंबूद्वीप पन्नात्ति सूत्रं.	४१४६	०	०	१८६०	१६०००	२२००६
६ १७	चंद्र पन्नात्ति सूत्रं.	२२००	०	०	०	९११४	११३१४
७ ५.८	सूर्य पन्नात्ति सूत्रं.	२२००	०	०	०	९०००	११२००

८ १८ ९ २० १० २१ ११ २२ १२ २३	निरावलिया सुयखंध सूत्रं. कप्पिया सूत्रं. कप्पवडंसिया सूत्रं. पुप्फिया सूत्रं. पुप्फचूलिया सूत्रं. वन्हिदशांग सूत्रं.	११०९	८	०	०	७००	१८०९

अथ मूल सूत्राणि.

१ २४	आवश्यकं	१००	३१००	०	१८०००	२२००० टिप्पन ४६००	४७८००

	विशेषावश्यकं	५०००	०	०	०	लघु १४००० बृहत् २८०००	४७०००
	पाक्षिकं सूत्रं	३००	०	०	४००	२७००	३४००
	उघनिर्युक्तिः	११७०	०	३०००	७००	७०००	११८७०
२ २५	दशवैकालिकं सूत्रं	७००	४५०	०	७०००	लघु २७०० बृहत् ६८१०	१७६६०
३ २६	पिंडनिर्युक्तिः	७००	०	०	०	लघु ४००० बृहत् ७०००	११७००

४ २७	उत्तराध्ययन सूत्रं.	२०००	५००	०	६०००	लघु १२००० बृहत् १७६४५	३८१४५

अथ छेद सूत्राणि.

१ २८	दशाश्रुत स्कंध सूत्रं.	१८३०	१६८	०	२२२५	०	४२२३
२ २९	बृहत्कल्प सूत्रं.	४७३	०	लघु ८००० बृहत् १२०००	१५००० विशेष ११०००	४२०००	८७४७३
३ ३०	व्यवहार सूत्रं.	६०००	०	६०००	१०३६१	३३६२५	५०९८६
४ ३१	पंचकल्प सूत्रं.	११३३	०	३१२५०	३१३०	०	७३८८

	जीतकल्प सूत्रं.	२०५	०	३१२४	१००० विशेपचूर्णि ११०००	७०००	२२३२९
५ ३२	निशिथ सूत्रं.	८१५	०	लघु ७४०० वृहत् १२०००	२८०००	०	४८२१५
६ ३३	महानिशिथ	लघुवांचना ३९००		मध्यम वांचना ४२००		वृहद्वांचना ४५००	१२२००

पइन्ना सूत्राणि.

१ ३४	चतुःशरण सूत्रं.	६४	०	०	०	०	६४
२ ३५	आतुरप्रत्याख्यानं सूत्रं.	८४	०	०	०	०	८४

३ ३६	भक्तपरिज्ञा सूत्रं,	१७१	०	०	०	०	१७१
४ ३७	महाप्रत्याख्यानं सूत्रं.	१३४	०	०	०	०	१३४
५ ३८	तंदुलवेयालीय सूत्रं.	४१०	०	०	०	०	४००
६ ३९	चंद्रवेध्यक सूत्रं.	१७६	०	०	०	०	१७६
७ ४०	गणिविद्या सूत्रं.	१००	०	०	०	०	१००
८ ४१	मरणसमाधि सूत्रं.	६५६	०	०	०	०	६५६
९ ४२	देवेंद्र स्तव सूत्रं वीर स्तव सूत्रं	२००	०	०	०	०	२००

१० ४३	गच्छाचार सू.ं.	१३८	०	०	०	०	१३८
	संस्तारक सूत्रं	१२२	०	०	०	०	१२२
	चूलिका सूत्रं.	तपिभा- षित सूत्रं. ७००	ज्योति- ष्क करंड सूत्रं १८९०	सिद्धप्रा- भृत सूत्रं १३३९	वसुदेव- हिंडि प्र- थम खंड ११०००	मध्यमखंड १०००० द्वीपसागर पन्नति २९००	तीर्थोडार सूत्र १९०० अंगवि द्या ९००० ये भी४५के अंतर भूतही है
१ ४४	नंदि सूत्रं	७००	०	०	२००१	लघु २३१२ बृहत् ७७३५	१२७४८
२ ४५	अनुयोगद्वार सूत्रं.	१८९९	०	०	३०००	लघु ३५०० बृहत् ६५००	१४८९९

प्र. ७५—श्री देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणसें पहिलां जैन मतका कोइ पुस्तक लिखा हुआ थाके नही.

उ.—अंगोपांगादि शास्त्रतो लिखे हुए नही मालुम होतेहै. परंतु कितनेक अतिशय अद्भुत चमत्कारी विद्याके पुस्तक और कितनीक आम्नायके पुस्तक लिखे हुए मालुम होतेहै, क्योंकि विक्रमादित्यके समयमें श्री सिद्धसेन दिवाकर नामा जैनाचार्य हुआहै, तिनौनें चित्रकुटके किल्लेमें एक जैन मंदिरमें एक बहुतभारी एक पथ्थरका बीचमे पोलाहवाला स्तंभ देखा, तिसमे श्री सिद्धसेनसें पहिले होगए कितनेक पूर्वधर आचार्योंने विद्यायोंके कितनेक पुस्तक स्थापन करेथे, तिस स्तंभका ढांकणा ऐसा किसी औषधीके लेपसे बंद करा था कि सर्व स्तंभ एक सरीखा मालुम पडताथा;

तिस स्तंभका ढांकणा श्री सिद्धसेन दिवाकरकों मालुम पड़ा, तिनोंने किसीक औषधीका लेप करा तिससें स्तंभका ढांकणा खुल गया. जब पुस्तक देखनेकों एक निकाला तिसका एक पत्र वांच्या, तिसके ऊपर दो विद्या लिखी हुइथी. एक सुवर्ण सिद्धी १ दूसरी परचक्र सैन्य निवारणी २ इन दोनो विद्यायेंके वांचे पीछे जब आगे बांचने लगे तब तिन विद्यायोंके अधिष्ठाता देवताने श्री सिद्धसेन कों कहा कि आगे मत वांचो, तुमारे भाग्यमें ये दोही विद्याहै। तब श्री सिद्धसेन दिवाकरजीने स्तंभका मुख वंद करा. वो एक पुस्तक अपने पास रखा, पीछे तिस पुस्तककों उज्जयन नगरीके श्री आवंती पार्श्वनाथजीके मंदिरमे गुप्तपणे कही रख दीया. पीछे वो पुस्तक श्री जिनदत्तसूरिजी महाराज जो विक्रम संवत् १२०४ मे थे तिनकों तिस

मंदिरमेंसे मिला. अब वोही पुस्तक जैसलमेरके श्री चिंतामणि पार्श्वनाथजीके मंदिरमें बम्फे यत्न· सें रखा हुआहै, ऐसा हमने सुनाहै. और चित्र-कुटका स्तंभ भूमिमें गरक हो गया, यह कथन कितनेक पट्टावलि प्रमुख ग्रंथोमें लिखा हुआहै. इस वास्ते श्री देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणसें पहिलां भी कितनेक पुस्तक लिखे हुए मालुम होतेहै.

प्र. ७६—श्री महावीरजीकेसमयमें कितने राजे श्री महावीरके भक्त थे.

उ—राजगृहका राजे श्रेणिक जिसका दूसरा नाम भंभसार था. १ चंपाका राजा भंभसारका पुत्र अशोकचंद्र जिसका नाम कोणिक प्रसिद्ध था, २ वैशालिनगरीका राजा चेटक, ३ काशी देशके नव मल्लिक जातिके राजे और कोशल देशके नव लोछिक जातिके राजे २१ पु-

लासपुरका विजयनामा राजा २१ अमलकल्पा नगरीका श्वेतनामा राजा २२ वीतभय पट्टनका उदायन राजा २४, कौशांबीका उदायन वत्स-राजा, २५ क्षत्रियकुंड ग्राम नगरका नंदिवर्धन राजा, २६ उज्जयनका चंडप्रद्योत राजा, २७ हि-मालय पर्वतके उत्तर तर्फ पृष्ठचंपाके शाल महा-शाल दो भाइ राजे २८ पोतनपुरका प्रसन्नचंद्र राजा, २९ हस्तिशीर्ष नगरका अदिनशत्रु राजा, ३० ऋषभपुरका धनावह नामा राजा, ३१ वीर-पुर नगरका वीरकृष्ण मित्र नामा राजा, ३२ वि-जयपुरका वासवदत्त राजा, ३३ सौगंधिक नग-रीका अप्रतिहत नामा राजा, ३४ कनकपुरका प्रियचंद्र राजा ३५ महापुरका बलनामा राजा, ३६ सुघोस नगरका अर्जुन राजा, ३७ चंपाका दत्त राजा, ३८ साकेतपुरका मित्रनंदी राजा ३९ इ-

त्यादि अन्यजी कितनेक राजे श्री महावीरके भक्त थे, येह सर्व राजायोंके नाम अंगोपांग शास्त्रोंमें लिखे हुएहै.

प्र. ७७—जो जो नाम तुमने महावीर भगवंतके भक्त राजायोंके लिखें है, बौधमतके शास्त्रोंमें तिनही सर्व राजायोंकों बौद्धमति लिखाहै, तिसका क्या कारणहै.

उ.—जितने राजे श्रीमहावीर भगवंतके भक्त थे, तिन सर्वकों बौधशास्त्रोंमें बौधमति अर्थात् बुधके भक्त नहि लिखेहै, परंतु कितनेक राजायोंका नाम लिखाहै, तिसका कारणतो ऐसा मालुम होताहैकि पहिलें तिन राजायोंने बुधका उपदेश सुकने बुधके मतकों माना होवेगा, पीछे श्रीमहावीर भगवंतका उपदेश सुनके जैनधर्ममें आये मालुम होतेहै, क्योंकि श्रीमहावीर भग-

चंतसें १६ वर्ष पहिलें गौतम बुधने काल करा, अर्थात् गौतम बुधके मरण पीछे श्रीमहावीर-स्वामी १६ वर्ष तक केवलज्ञानी विचरे थे तिनके उपदेशसें कितनेक बौद्ध राजायोंने जैन धर्म अंगीकार करा, इस वास्ते कितनेक राजायोंका नाम दोनो मतोमें लिखा मालुम होताहै.

प्र. ७०—क्या महावीर स्वामीसें पहिलां भरतखंडमें जैनधर्म नही था ?

उ.—श्रीमहावीर स्वामीसें पहिलां भरतखंडमें जैनधर्म बहुत कालसें चला आता था, जिस समयमें गौतम बुधने बुध होनेका दावा करा, और अपना धर्म चलाया था, तिस समयमें श्री पार्श्वनाथ २३ मे तीर्थंकरका शासन चला था. तिनके केशी कुमार नामे आचार्य पांचसो ५०० साधुयोंके साथ विचरते थे, और केशी कु-

मारजी गृहवासमें उज्जयिनिका राजा जयसेन और तिसकी पट्टराणी अनंगसुंदरी नामा तिनके पुत्र थे, विदेशि नामा आचार्यके पास कुमार ब्रह्मचारीने दीक्षा लीनी, इस वास्ते केशी कुमार कहे जातेहै, श्री पार्श्वनाथके वमे शिष्य श्री शुभदत्तजी गणधर १ तिनके पट्ट ऊपर श्री हरिदत्ताचार्य २, तिनके पद ऊपर श्री आर्यसमुद्र ३, तिनके पट्ट ऊपर श्री केशी कुमारजी हुएहै, जिनोने स्वेतंविका नगरीका नास्तिकमति प्रदेशी नामा राजेकों प्रतिबोधके जैनधर्मी करा, और श्रीमहावीरजीके वमे शिष्य इंद्रभूति गौतमके साथ श्रावस्ति नगरीमें श्री केशी कुमार मिले तहां गौतम स्वामीके साथ प्रश्नोत्तर करके शिष्योंका संशय दूर करके श्री महावीरका शासन अंगीकार करा तथा श्रीपार्श्वनाथजीके संतानो-

मेंसे कालिक पुत्र १ मैघिला २ आनंदरक्षित ३ काश्यप ४ ये नामके चार स्थविर पांचसौ साधुयोंके साथ तुंगिका नगरीमे आये तिस समयमें श्री महावीर भगवंत इंद्रभूति गौतमादि साधुयोंके साथ राजगृह नगरमें विराजमान थे, तथा साकेतपुरका चंद्रपाल राजा तिसकी कलासवेश्या नामा राणी तिनका पुत्र कलासवैशिक नामे तिसने श्री पार्श्वनाथके संतानीये श्रीस्वयंप्रभाचार्यके शिष्य वैकुंठाचार्यके पास दीक्षा लीनी. पीछे राजगृहनगरमें श्रीमहावीरके स्थविरोसें चर्चा करके श्री महावीरका शासन अंगीकार करा. इसी तरे पार्श्वसंतानीये गंगेय मुनि तथा उदकपेढाल पुत्र मुनिने श्रीमहावीरका शासन अंगीकार करा. इन पुर्वोक्त आचार्योंके समयमे वैशालि नगरीका राजा चेटकादि और क्षत्रियकुंडनगरके ज्यातवंशी

काश्यप गोत्री सिद्धार्थ राजादि श्रावक थे, और त्रिसलादि श्राविकायो थी. बुधधर्मके पुस्तकमें विशालि नगरीके राजाकों बुध के समयमें पार्श्व धर्मके मानने वाला अर्थात् जैनधर्मके मानने वाला लिखाहै, और बुधधर्मके पुस्तकमें ऐसाभी लिखाहैकि एक जैनधर्मी वडे पुरुषकों बुधने अपने उपदेशसें बौद्ध धर्मी करा, इस वास्ते श्रीमहावीरसें पहिलां जैनधर्म भरतखंडमें श्रीपार्श्वनाथके शासनसें चलता था.

प्र. ७९—श्रीमहावीरजीसें पहिले तेवीसमें तीर्थंकर श्रीपार्श्वनाथजी हुए है. इस कथनमें क्या प्रमाण है.

उ.—श्रीपार्श्वनाथजीसें लेके आज पर्यंत श्री पार्श्वनाथकी पट्ट परंपरायमें ८३ तैरासी आचार्य हुए है. तिनमेंसें सर्वसें पिछला सिद्धसूरि नामे

आचार्य सांप्रति कालमें मारवाड़में विचरेहै ह-
मने अपनी आंखोसें देखाहै, जिसकी पट्टावलि
आज पर्यंत विद्यमान है, तिस पार्श्वनाथजीके
होनेमे यही प्रत्यक्ष और अनुमान प्रमाण बलवंतहै.

प्र. ७०—कौन जाने किसी धूर्त्तनें अपनी क-
ल्पनासें श्रीपार्श्वनाथ और तिनकी पट्ट परंपराय
लिख दीनी होवेगी, इससे हमकों क्योंकर श्री
पार्श्वनाथ हुए निश्चित होवें ?

उ.—जिन जिन आचार्योंके नाम श्रीपार्श्व-
नाथजीसें लेके आज तक लिखे हुए है, तिनोमेंसें
कितनेक आचार्योंने जो जो काम करेहै वे प्रत्यक्ष
देखनेमें आते है जैसें श्री पार्श्वनाथजीसें छठे ६
पट्ट ऊपर श्री रत्नप्रभ सूरिजीने वीरात् ७० वर्ष
पीछे उपकेश पट्टमें श्री महावीर स्वामीकी प्र-
तिष्टा करी सो मंदिर और प्रतिमा आज तक

विद्यमान है, तथा अयरणपुरकी ठावनीसें ६ कोसके लगन्नग कोरंटनामा नगर वञ्जम्प परा है, जिस जगो कोरटा नामें आजके कालमें गाम वसता है. तहांन्नी श्रीमहावीरजीकी प्रतिमा मंदिरकी श्रीरत्नप्रन्न सूरिजीकी प्रतिष्टा करी हुइ अब विद्यमान कालमें सो मंदिर खमाहै, तथा जसवाल और श्रीमालि जो वणिये लोकोंमें श्रावक ज्ञाति प्रसिद्ध है, वेन्नी प्रथम श्रीरत्नप्रन्न सूरिजीनेही स्थापन करीहै, तथा श्रीपार्श्वनाथजीसें १७, सत्तरमें पट्ट ऊपर श्री यक्षदेव सूरि हुए है, वीरात् ५८५ वर्षे जिनोनें बारा वर्षीय कालमें वज्रस्वामीके शिष्य वज्रसेनके परलोक हुए पीठे तिनके चार मुख्य शिष्य जिनकों वज्रसेनजीने सोपारक पट्टणमें दीक्षा दीनी थी, तिनके नामसे चार शाखा तथा कुल स्थापन करें, वे येहैं; ना-

गेंद्र १, चंद्र २, निवृत्त ३, विद्याधर ४, यह चारों कुल जैन मतमें प्रसिद्धहै; तिनमेंसे नागेंद्र कुलमें उदयप्रभ मल्लिषेणसूरि प्रमुख और चंद्रकुलमें वड गच्छ, तप गच्छ, खरतर गच्छ, पूर्णवल्लीय गच्छ, देवचंद्रसूरि कुमारपालका प्रतिबोधक श्रीहेमचंद्रसूरि प्रमुख आचार्य हुए है. तथा निवृत्तकुलमें श्री शीलांकाचार्य श्रीद्रोणसूरि प्रमुख आचार्य हुएहै. तथा विद्याधरकुलमें १४४४ ग्रंथका कर्त्ता श्रीहरिभद्रसूरि प्रमुखाचार्य हुए है, तथा मैं इसग्रंथका लिखनेवाला चंद्रकुलमें हुं; तथा पैंतीसमें पट्ट ऊपर श्रीदेवगुप्तसूरिजी हुए है. जिनोंके समीपे श्री देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणजीने पूर्व २ दो पढे थे, तथा श्री पार्श्वनाथजीके ४३ मे पट्ट ऊपर श्री कक्कसूरि पंच प्रमाण ग्रंथके कर्त्ता हुएहै, सो ग्रंथ विद्यमानहै तथा ४४ मे पट्ट ऊपर श्रीदेवगुप्तसूरिजी

विक्रमात् १०७२ वर्षे नवपद प्रकरणके करता हुए है, सोभी ग्रंथ विद्यमानहै; तथा श्रीमहावीरजीकी परंपराय वाले आचार्योंने अपने बनाए कितनेक ग्रंथोंमें प्रगट लिखाहैकि, जो उपकेश गछहै सो पट्ट परंपरायसें श्रीपार्श्वनाथ २३ तेवीसमें तीर्थंकरसें अविछिन्न चला आताहै; जब जिन आचार्योंकी प्रतिमा मंदिरकी प्रतिष्ठा करी हुइ और ग्रंथ रचे हुए विद्यमान है तो फेर तिनके होनेमें जो पुरुष शंसय करताहै तिसकों अपने पिता, पितामह, प्रपितामह आदिकी वंशपरंपरायमेंभी शंसय करनां चाहिये, जैसे क्या जाने मेरी सातमी पेढीका पुरुष आगे हुआहैके नही. इस तरेंका जो शंसय कोइ निवेक विकल करें तिसकों सर्व बुद्धिमान् उन्मत्त कहेंगे. इसी तरें श्रीपार्श्वनाथकी पट्ट परंपरायके विद्यमान जो पुरुष श्री

पार्श्वनाथ २३ तेवीसमें तीर्थंकरके होनेमे नही करे अथवा शंसय करे तिसकोंभी प्रेक्षावंत पुरुष उन्मत्तोंही पंक्तिमे समझते है, तथा धूर्त्त पुरुष जो काम करताहै सो अपने किसी संसारिक सुखके वास्ते करता है. परंतु सर्व संसारिक इंद्रिय जन्य सुखसे रहित केवल महा कष्ट रूप परंपराय नही चला सक्ताहै, इस वास्ते जैनधर्मका संप्रदाय धूर्त्तका चलाया हुआ नही, किंतु अष्टादश दूषण रहित अर्हंतका चलाया हुआहै.

प्र. ८१ कितनेक यूरोपीअन पंडित प्रोफेसर ए. वेबर साहिबादि मनमे ऐसी कल्पना करतेहै कि जैन मतकी रीती बुध धर्मके पुस्तकोंके अनुसारे खडी करीहै, प्रोफेसर वेबर ऐसेंभी मानतेहै कि, बौध धर्मके कितने साधु बुधकों नाकबूल करके बुधके एक प्रतिपक्षीके अर्थात् महा-

वीरके शिष्यवनें और एक वार्त्ता नवीन जोरुके जैनमत नामे मत खरा करा, इस कथनकों आप सत्य मानते होके नही?

उ.—इस कथनकों हम सत्य नही मानते है; क्यों कि प्रोफेसर जेकोवीने आचारंग और कल्पसूत्रके अपने करे हुए इंग्लीश जाषांतरकी उपयोगी प्रस्तावनामें प्रोफेसर ए. वेवर और मी० ए. वाथकी पूर्वोक्त कल्पनाकों जूठी दिखाइहै; और प्रोफेसर जेकोवीने यह सिद्धांत अंतमें वतायाहै कि जैनमतके प्रतिपक्षीयोंनें जैन मतके सिद्धांत शास्त्रों ऊपर जरोंसा रखनां चाहिये, कि इनमें जो कथनहै सो मानने लायकहै. विशेष देखनां होवेतो माक्तर बूलरसाहिव कृत जैन दंत कथाकी सत्यता वास्ते एक पुस्तकका अंतर हिस्सा जागहै, सो देख लेनां हमत्री अपनी बुद्धिके

अनुसारे इस प्रश्नका उत्तर लिखते है. हम ऊपर जैनमतकी व्यवस्था श्रीपार्श्वनाथजीसें लेके आज तक लिख आएहै, तिससें प्रोफेसर ए. वेबरका पूर्वोक्त अनुमान सत्य नही सिद्ध होताहै. जेकर कदाचित् बौध मतके मूल पिटग ग्रंथोमें ऐसा लेख लिखा हुआ होवेकि, बुधके कितनेक शिष्य बुधकों नाकबूल करके बुधके प्रतिपक्षी निर्ग्रंथोके सिरदार न्यात पुत्रके शिष्य बने; तिनोंने बुधके समान नवीन कल्पना करके जैनमत चलायाहै. जेकर ऐसा लेख होवे तबतो हमकोबी जैनमतकी सत्यता विषे संशय उत्पन्न होवे, तबतो हमबी प्रोफेसर ए. वेबरके अनुमानकी तर्फ ध्यान देवें; परंतु ऐसा लेख जुग बुधके पुस्तकोंमे नही है क्योंकि बुधके समयमे श्रीपार्श्वनाथजीके हजारों साधु विद्यमानथे तिनके होते हुए ऐसा पुर्वोक्त

लेख कैसें लिखा जावे, वलके जैन पुस्तकोंमेंतो बुधकी वावत बहुत लेखहै. श्रीआचारंगकीटीकामें ऐसा लेखहै. मौद्गलिस्वातिपुत्राभ्यां शौद्धोदनिं ध्वजीकृत्य प्रकाशितः अस्यार्थ ॥ माद्गलिपुत्र अर्थात् मौद्गलायन और स्वातिपुत्र अर्थात् सारीपुत्र दोनोंने शुद्धोदनके पुत्रकों ध्वजीकृत्य अर्थात् ध्वजाकी तरें सर्व मताध्यक्षोंसें अधिक ऊंचा सर्वोत्तम रूप करकें प्रकाश्याहै. आचारंगके लेख लिखनेवालेका यह अभिप्रायहै कि शुद्धोदनका पुत्र सर्वज्ञ अतिशयमान् पुरुष नही था, परंतु इन दोनों शिष्योंनें अपनी कल्पनासें सर्वसें उत्तम प्रकाशित करा, इस वास्ते बौद्धमत स्वरूचिसें वनायाहै; तथा श्री आचारंगजीकी टीकामें एक लेख ऐसाभी लिखा है, तच्चनिकोपासकोनेंदवला तू, बुद्धोत्पत्ति कथानकात् ऊपमुपगन्तेत्. अर्थ बुधका उपासक आ-

नंद तिसकी बुद्धिके बलसें बुधकी उत्पत्ति हूइहै, जेकर यह कथा सत्यसत्य पर्षदामें कथन करीये तो बौद्धमतके मानने वालोंकों सुनके द्वेष उत्पन्न होवे, इस वास्ते जिस कथाके सुननेसें श्रोताकों द्वेष उत्पन्न होवे तैसी कथा जैनमुनि परिषदामें न कथन करे, इस लेखसें यह आशय हैकि बुधकी उत्पत्तिरूप सच्ची कथा बुधकी सर्वज्ञता और अति उत्तमता और सत्यता और तिसकी कल्पित कथाकी विरोधनीहै, नहीतो तिसके भक्तोकों द्वेष क्यों कर उत्पन्न होवे, इस वास्ते जैन मत इस अवसर्पिणिमे श्री ऋषभदेवजीसें लेकर श्रीमहावीर पर्यंत चौवीस तीर्थंकरोंका चलाया हुआ चलताहै परंतु कल्पित नहीहै.

प्र.८४—बुद्धकी उत्पतिकी कथा आपने किसी श्वेतांबरमतके पुस्तकोमें वांची है ?

उ.—स्वेतांवरमतके पुस्तकोमेंतो जितना बुधकी बावत कथन हमने श्री आचारंगजीकी टीकामें देखा वांचाहै तितनातो हमने ऊपरके प्रश्नमें लिख दीयाहै, परंतु जैनमतकी दुसरी शाखा जो दिगंवरमतकीहै तिसमे एक देवसेनाचार्यने अपने रचे हूए दर्शनसार नामक ग्रंथमे बुधकी उत्पत्ति इस रीतीसें लिखीहै. गाथा ॥ सिरि पासणाह तित्थे ॥ सरऊ तीरे पलासणयर त्थे॥ पिहि आसवस्स सीहे ॥ महा लुदो वुद्धकित्ति मुणी ॥१॥ तिमिपूरणासणेया ॥ अहिगयपवज्जावऊपरमब्भठे ॥ रत्तंवरंधरित्ता ॥ पवद्धियतेणएयत्तं ॥२॥ मंसस्सनत्थिजीवो जहाफलेदहियदुद्धसक्कराए ॥ तम्हातंमुणित्ता भरकंतोणत्थिपाविठ्ठो॥३॥ मज्जंणवज्जणिज्जं ॥ दव्वदवंऊहजलंतहएदं ॥ इति लोएघोसिता पवत्तियंसंघसावज्जं ॥४॥ अणोकरे

दिक्कम्मं ॥ अणोतंमुंजदीसिदंतं ॥ परिकप्पिकऽ-
णसूसं ॥ वसिकिम्माणिरयमुववण्णो ॥५॥ इतिइ-
नकी भाषा अथ बौद्धमतकी उत्पति लिखते है.
श्री पार्श्वनाथके तीर्थमें सरयू नदीके कांठे ऊपर
पलासनाम नगरमें रहा हुआ, पिहिताश्रव नामा
मुनिका शिष्य बुद्धकीर्ति जिसका नाम था, ए-
कदा समय सरयू नदीमें बहुत पानीका पुर चढी
आया तिस नदीके प्रवाहमें अनेक मरे हुए, मछ
वहते हुए कांठे ऊपर आ लगे, तिनको देखके
तिस बुद्धकीर्तिने अपनै मनमें ऐसा निश्चय क-
राकि स्वतः अपने आप जो जीव मर जावे ति-
सके मांस खानेमे क्या पापहै, तब तिसनेअंगी-
कार करी हुइ प्रवज्याव्रत रूप छोड दीनी,अर्थात्
पूर्वे अंगीकार करे हुए धर्मसें भ्रष्ट होके मांस
भक्षण करा. और लोकोंके आगे ऐसा अनुमान

कथन कराकी मांसमें जीव नही है, इस वास्ते इसके खानेमें पाप नही लगताहै. फल, फुल, दहिं तरें तथा मदीरा पीनेसेंनीपाप नही है. ढीला द्रव्य होनेसें जलवत्. इस तरेंकी प्ररूपणा करके तिसने बौद्धमत चलाया, और यहनी कथन करा के सर्व पदार्थ क्षणिकहै, इस वास्ते पाप पुन्यका कर्त्ता अन्यहै, और नोक्ता अन्यहै. यह सिद्धांत कथन करा. बौद्धमतके पुस्तकोमें ऐसानी लेखहै कि, बुधका एक देवदत्तनामा शिष्य था. तिसने बुधके साथ बुधकों मांस खाना छुमानेके वास्ते बहुत ऊगडा करा, तोनी शाक्यमुनि बुधनें मांस खाना न गेमा, तब देवदत्तने बुधकों गेम दीया, जब बुधने काल करा था, तिस दिननी चुंदनामा सोनीके घरसें चावलोंकेबीच सूयरका मांसरांधा हुआ खाके मरणको प्राप्त हुआ. यह कथननी बु-

धमतके पुस्तकोंमें है; और स्वेतांबराचार्य साढे-तीन करोड़ नवीन श्लोकोंका कर्त्ता श्री हेमचंद्र-सूरिजीने अपने रचे हूए योगशास्त्रके दूसरे प्रका-शकी वृत्तिमें यह श्लोक लिखाहै। स्वजन्मकाल एवात्म, जनन्युदरदारिणः मांसोपदेशदातुश्च, क-थंशौद्धोदनेर्दया ॥११॥ अर्थ। अपने जन्मकालमें ही अपनी माता मायाका जिसनें उदर विदारण करा, तिसके, और मांस खानेके उपदेशके देने-वाले शुद्धोदनके पुत्रके दया कहांसे थी, अपितु नही थी. इस ऊपरके श्लोकसें यह आशय निक लताहै कि जब बुद्ध गर्भमें था, तब तिसके सब वसें इसकी माताका उदर फट गयाथा. अथवा उदर विदारके इसको गर्भमेंसें निकाला होवेगा.

चाहो कोइ निमित्त मिला होवे, परंतु इनकीमाता इनके जन्म देनेसें तत्काल मरगइ थी. तत्काल

मरणांतो इनकी माताका वुध धर्मके पुस्तकोंमेंन्नी लिखाहै. और वुध मांसाहार गृहस्थावस्थामेंन्नी करता होवेगा, नहीतो मरणांत तकन्नी मांसके खानेसें इसका चित्त तृप्तही न हूआ ऐसा वौद्धमतके पुस्तकोंसेंही सिद्ध होताहै. इस वास्तेही वौद्धमतके साधु मांस खानेमे घृणा नही करते है, और वेखटके आज तक मांस न्नक्षण करे जाते है, परंतु कच्चे मांसमें अनगिनत कृमि समानजीव उत्पन्न होतेहै, वे जीव वुधकों अपने ज्ञानसेंनही दीखेहै, इस वास्तेही वुध मतके उपासक गृहस्थ लोक अनेक कृमि संयुक्त मांसकों रांधते है, और खातेहै. इस मतमें मांस खानेका निषेध नहीहै, इस वास्तेही मांसाहारी देशोंमें यह मत चलताहै.

प्र.७३–श्रीमहावीरजी छद्मस्थ कितनेकाल कतरहे और केवली कितने वर्ष रहे ?

उ.—बारां वर्ष १२ छ ६ मास १५ पंदरा दिन छद्मस्थ रहे. और तीस वर्ष केवली रहेहैं.

प्र. ७४—भगवंतने छद्मस्थावस्थामें किस किस जगे चौमासे करे. और केवली हुए पीछे किस किस जगे चौमासे करेथे ?

उ.—अस्थि ग्रामसें १, दुसरा राजगृहमें, २, तीसरा चंपामें ३, चौथा पृष्ट चंपामें ४, पांचमा भाद्रिकामें ५, छठा भद्रिकामें ६, सातमा आलंभियामें ७, आठमा राजगृहमे ८ नवमाअनार्यदेशमे ९, दशमा सावत्थिमे १०, इग्यारमा विशालामे ११, बारमा चंपामे १२, येह १२ छद्मस्थावस्थाके चौमासे करे केवली हुए. पीछे १२ राजगृहमें ११ विशालामें ६ मिथलामें १ पावापुरीमें एवं सर्व ३० हुए.

प्र. ७५--श्रीमहावीरस्वामीका निर्वाण किस जगें और कब हुआ था ?

उ–पावापुरी नगरीके हस्तिपाल राजाकी दफतर लिखनेकी सन्नामें निवास हुआथा, ओर विक्रमसें ४७० वर्ष पहिलें और संपति कालके १९४५ के सालसें २४१५ वर्ष पहिलें निर्वाण हुआथा.

प्र. ७६–जिस दिन भगवंतका निर्वाण हुआ था सो कौनसा दिन वा रात्रिथी ?

उ,–भगवंतका निर्वाण कार्त्तिक वदि अमावस्याकी रात्रिके अंतमें हुआथा.

प्र. ७७– तिस दिन रात्रिकी यादगीरी वास्ते कोइ पर्व हिंदुस्थानमे चलताहै वा नही ?

उ.–हिंदु लोकमें जो दिवालीका पर्व चलताहै, सो श्री महावीरके निर्वाणके निमित्तसेंही चलताहै.

प्र. ७८–दिवालिकी उतत्ति श्री महावीरकें निर्वाणसें किसतरें प्रचलित हुइहै ?

उ.—जिस रात्रिमें श्रीमहावीरका निर्वाण हुआ था, तिस रात्रिमें नव मल्लिक जातिके राजे और नव लेछकी जातिके राजे जो चेटक महाराजाके सामंत थे, तिनोने तहां उपवास रुप पोषध करा था, जब भगवंतका निर्वाण हुआ तब तिन अठारहही राजायोंने कहा कि इस भरतखंडमें भाव उद्योत तो गया, तिसकी नकलरूप हम द्रव्योद्योत करेंगे, तब तिन राजायोंनें दीपक करे, तिस दिनसे लेकर यह दीपोत्सव प्रवृत्त हुआ है. यह कथन कल्पसूत्रके मुल पाठमें है. जो अन्य मतवाले दिवालीका निमित्त कथन करतेहै, सो कल्पितहै क्योंकि किसि मतके भी मुख्य शास्त्रमें इस पर्वको उत्पत्तिका कथन नही है.

प्र. ८९—भगवंतके निर्वाण होनेके समयमें

शक्रइंद्रे आयु वधावनेके वास्ते क्या विनती करी थी, और जगवंत श्री महावीरजीयें क्या उत्तर दीनाथा ?

ज.–शक्रइंद्रे यह विनती करीथी के, हे स्वामि एक क्षणमात्र अपना आयु तुम वधावो, क्योंकि तुमारे एक क्षणमात्र अधिक जीवनेसें तुमारे जन्म नक्षत्रोपरि जस्म राशिनामा तीस ३० मा ग्रह आया है, सो तुमारे शासनकों पिडा नही दे सकेगा, तब जगवंतने ऐसे कहाके हे इंद्र, यह पीछे कदेइ हूआ नही, और होवेगाजी नही कि कोइ आयु वधा सके; और जो मेरे शासनकों पीडा होवेगी सो अवश्य होनहार है, कदापी नही टलेगी.

प्र. ए७–तबतो कोइजी देह धारी आयु नही वधा सक्ताहै यह सिद्ध हूआ ?

उ.–हां, कोइन्नी क्षणमात्र आयु अधिक नही वधा सक्ता है.

प्र.ए१–कितनेक मतावलंबी कहतेहैं कि योगान्न्यासादिके करनेसें आयु वध जाताहै, यह कथन सत्यहै वा नही ?

उ.–यह निकेवल अपनी महत्वता वधाने वास्ते लोकों गप्पे ठोकतेहै, क्योंकी चौवीस तीर्थंकर, ब्रह्मा, विष्नु, महेश, पातंजली, व्यास, ईशामसीह, महम्मद प्रमुख जे जगतमें मतचलाने वाले सामर्थ पुरुष गिने जातेहै, वेन्नी आयु नही वधा सकेहै, तो फेर सामान्य जीवोंमें तो क्या शक्तिहै के आयु वधा सके; जेकर किसीने वधाइ होवे तो अब तक जीता क्यों नही रहा.

प्र. ए२–न्नगवंतका न्नाइ नंदिवर्द्धन, और न्नगवंतकी संसारावस्थाकी यशोदा स्त्री और न्नग-

वंतकी बेटी प्रियदर्शना, और ञगवंतका जमाइ जमाली, इनका क्या वर्त्तत हूआ था ?

ज.–नंदीवर्द्धन राजातो श्रावक धर्म पालता रहा ओर यशोदाञ्नी श्राविका तो थी, परंतु यशोदाने दीक्षा लीनी मैंने किसी शास्त्रमें नही वांचाहै. और ञगवंतकी पुत्रीने एक हजार स्त्रीयोंके साथ और जमाइ जमालिने ५०० पांचसौ पुरुषोंके साथ ञगवंत श्री महावीरजीके पास दीक्षा लीनीथी.

प्र. ए३–श्रीमहावीर ञगवंतने जो अंतमें सोलां पोहर तक देशना दीनीथी, तिसमे क्या क्या ञपदेश कराथा ?

ज.–ञगवंतने सर्वसें अंतकी देशनामें ५५ पचपन अशुञ्न कर्मोके जैसें जीव ञवांतरमें फल ञोगतेहै, ऐसे अध्ययन और पचपन ५५ शुञ्न

उ.—सर्व कर्म जन्य उपाधि रूप अग्निका जो बुझ जाना तिसकों निर्वाण कहते है, अर्थात् सर्वोपाधिसें रहित केवल, शुद्ध, बुद्ध सच्चिदानंद रूप जो आत्माका स्वरूप प्रगट होना, तिसकों निर्वाण कहते है.

प्र. ८६—जीवकों निर्वाण पद कब प्राप्त होता है?

उ. जब शुभाशुभ सर्व कर्म जीवके नष्ट हो जातेहै तब जीवको निर्वाणपद प्राप्त होताहै.

प्र. ८७—निर्वाण हूआ पीछे आत्मा कहां जाता है, और कहां रहताहै?

उ.—निर्वाण हूआ पीछे आत्मा लोकके अग्र भागमे जाताहै, और सादिअनंत काल तक सदा तहांही रहताहै.

प्र. ८८—कर्म रहित आत्माकों लोकाग्रमें

कौन ले जाताहै ?

उ.–आत्मामें ऊर्द्धगमन स्वन्नावहै, तिससें आत्मा लोकाग्र तक जाताहै.

प्र. एए–आत्मा लोकाग्रसें आगे क्यों नही जाताहै ?

उ.–आत्मामें ऊर्द्धगमन स्वन्नाव तो है, परंतु चलनेमे गति साहायक धर्मास्तिकाय लोकाग्रसें आगे नहीहै, इस वास्ते नही जाताहै. जैसें मछमे तरनेकी शक्तितो है, परंतु जल विना नही तरसक्ताहै, तैसें मुक्तात्मान्नी जानना.

प्र. १००–सर्व जीव किसी कालमें निर्वाण पद पावेंगे के नही ?

उ.–सर्व जीव निर्वाण पद किसी कालमें न्नी नही पावेंगे.

प्र. १०१–क्या सर्व जीव एक सरीखे नही

उ.—जिस वस्तुकी उत्पत्ति होतीहै, सो नाशवंत होता है, परंतु आत्माकी उत्पत्ति नही हुइहै, क्योंकि जिस वस्तुकी उत्पत्ति होतीहै तिसका उपादान अर्थात् जिसकी आत्मा वन जावे जैसें घमेका उपादान मिट्टीका पिंम है, सो उपादान कारण कोइ अरूपी ज्ञानवंत वस्तु होनी चाहिये, जिसमें आत्मा बने, ऐसा तो आत्मासें पहिलां कोइभी उपादान कारण नही है; इसवास्ते आत्मा अनादि अनंत अविनाशी वस्तु है.

प्र १०५—जेकर कोइ ऐसे कहे आत्माका उपादान कारण ईश्वर है, तबतो तुम आत्माकों अनित्य मानोगेके नही.

उ—जब ईश्वर आत्माका उपादान कारण मानोगे, तबतो ईश्वर और सर्व अनंत संसारी आत्मा एकही हो जावेगी, क्योंकि कार्य अपणे

उपादान कारणसें भिन्न नही होता है.

प्र. १०६--ईश्वर और सर्व संसारी आत्मा एकही सिद्ध होवेगेतो इसमे क्या हानि है ?

उ.–ईश्वर और सर्व संसारी आत्मा एकही सिद्ध होवेगे तो नरक तिर्यंचकी गतिमेंभी ईश्वरही जावेगा, और धर्माधर्मभी सर्व ईश्वरही करनेवाला और चौर, यार, लुच्चा, लफंगा, अगम्य गामी इत्यादि सर्व कामका कर्ता इश्वरही सिद्ध होवेगा, तवतो वेदपुराण, वैवल, कूरान प्रमुख शास्त्रभी ईश्वरने अपनेही प्रतिवोध वास्ते रचे सिद्ध होवेगे, तवतो ईश्वर अज्ञानी सिद्ध होवेगा. जव अज्ञानी सिद्ध हुआ तवतो तिसके रचे शास्त्रभी जूठे और निष्फल सिद्ध होवेगे, ऐसे जव सिद्ध होगा तवतो माता, वहिन, वेटीके गमन करनेकी शंका नही रहेगी, जिसके मनमें जो

आवे सो पाप करेगा, क्योंके सर्व कुछ करने कराने फल भोगने भुक्ताने वाला सर्व ईश्वरही है, ऐसे माननेसे तो जगतमे नास्तिक मत खमा करना सिद्ध होवेगा.

प्र. १०७—जीवको पुनर्जन्म किस कारणासे करणा पडता है !

उ -जीवहिंसा, १ जूठ बोलना, २ चौरी करनी; ३ मैथुन, स्त्रीसें भोग करना, ४ परिग्रह रखना, ५ क्रोध ६ मान ७ माया ८ लोभ ९ एवं ए राग १० द्वेष ११ कलह १२ अभ्याख्यान अर्थात् किसीकों कलंक देना १३ पैशुन, १४ परकी निंदा करनी १५ रति अरति १६ मायामृषा १७ मिथ्यादर्शन शल्य, अर्थात् कुदेव, कुगुरु, कुधर्म, इन तीनोको सुदेव; सुगुरु; सुधर्म करके मानना १८. जब तक जीव येह अष्टादश पाप

सेवन करताहै, तबतक इसकों पुनर्जन्म होताहै.

प्र. १०८–जीवकों पुनर्जन्म बंध होनेका क्या रस्ताहै ?

उ.--ऊपर लिखे हुइ अष्टादश पापका त्याग करे, और पूर्व जन्मांतरोमें इन अष्टादश पापोंके सेवनेसे जो कर्मोका बंध कराहै, तिसकों अर्हंतकी आज्ञानुसार ज्ञान श्रद्धा जप तप करनेसें सर्वथा नाश करे तो फेर पुनर्जन्म नही होताहै.

प्र. १०९–तीर्थंकर महाराजके प्रभावसें अपना कल्याण होवेगा, के अपनी आत्माकेगुणोके प्रभावसें हमारा कल्याण होवेगा ?

उ.–अपनी आत्माका निज स्वरुप केवल ज्ञान दर्शनादि जब प्रगट होवेगे, तिसके प्रभावमें हमारी तुमारी मोक्ष होवेगी.

प्र. ११०– जेकर निज आत्माके गुणोंसे·

मोक्ष होवेगी, तवतो तीर्थंकर भगवंतकी भक्ति करनेका क्या प्रयोजन है ?

उ.—तीर्थंकर भगवंतकी भक्ति करनेमें तीर्थंकर भगवंत निमीत्त कारणहै. विना निमत्तके अपनी आत्माके गुणरुप उपादान कारण कदेइ फल नही देताहै. तीर्थंकर निमित्तभूत होवे तव भक्तिरुप उपादान कारण प्रगट होताहै तिससेंही; आत्माके सर्व गुण प्रगट होतेहै, तिनसें मोक्ष होताहै. जैसे घट होनेमे मिट्टी उपादान कारनहै, परंतु विना कुलाल चक्र दंड चीवरादि निमित्तके कदापि घट नहि होताहै, तैसेंही तीर्थंकर रुप निमित्त कारण विना आत्माको मोक्ष नही होता है, इस वास्ते तीर्थंकरकी भक्ति अवश्य करने योग्यहै.

प्र. ११९—जगतमें जीव पुन्य पाप करतेहै

तिनके फलका देनेवाला परमेश्वरहै वा नही?

उ.–पुन्य पापके फलका देनेवाला परमेश्वर नही है.

प्र. ११३–पुन्य पापके फलका दाता ईश्वर मानिये तो क्या हरज है?

उ.–ईश्वर पुन्य पापका फल देवे तब तो ईश्वरकी ईश्वरताकों कलंक लगता है.

प्र. ११४–क्या कलंक लगताहै?

उ.–अन्यायता, निर्दयता, असमर्थता अज्ञानतादि.

प्र. ११५–अन्यायता दूषण ईश्वरकों पुन्य पापके फल देनेसें कैसें लगताहै?

उ.–जब एक आदमीनें तलवारादिसें किसी पुरुषका मस्तक छेदा, तब मस्तकके छिदनेसें उस पुरुषकों जो महा पीडा ...ने ... पडीहै,

सो फल ईश्वरने दूसरे पुरुषके हाथसें उसका मस्तक कटवाके भुक्ताया, तद पीछे तिस मारने वालेकों फांसी आदिकसें मरवाके तिसकों तिस शिर छेदन रूप अपराधका फल भुक्ताया, ईश्वरनें पहिलां तिसका शिर कटवाया, पीछे तिसकों फांसी देके तिस शिर छेदनेका फल भुक्ताया; ऐसे काम करनेसें ईश्वर अन्यायी सिद्ध होताहै.

प्र. ११६—पुन्य पापके फल भुक्तानेसें ईश्वरमें निर्दयता क्यों कर सिद्ध होतीहै:

उ.—जब ईश्वर कितने जीवांकों महा दुखी करताहै, तब निर्दयी सिद्ध होताहै, शास्त्रोंमें तो ऐसें कहताहै किसी जीवकों मत मारना, दुखीभी न करनां, भूखेकों देखके खानेकों देनां, और आप पूर्वोक्त काम नही करताहै, जीवांकों मारताहै, महा दुखी करताहै. भूखसें लाखो क

रोगी मनुष्य कालादिमें मर जातेहै, तिनकों खानेकों नही देताहै इस वास्ते निर्दयी सिद्ध होताहै.

प्र. ११७–ईश्वरतो जिस जीवने जैसा जैसा पुन्य पाप कराहै तिसको तैसा तैसा फल देता है. इसमे ईश्वरकों कुछ दोष नहि लगताहै, जैसें राजा चौरकों दंड देताहै और अच्छे काम करने वालेकों इनाम देताहै.

उ.–राजातो सर्वचोराकों चोरी करनेसें बंद नही कर सकता है. चाहताहै कि मेरे राज्यमें चोरी न होवेतो ठीकहै, परंतु ईश्वरकों तो लोक सर्व सामर्थ्यवाला करतेहै, तो फेर ईश्वर सर्व जीवांकों नवीन पाप करनेसे क्यों नही मने करताहै. मने न करनेसें ईश्वर जान बुझके जीवोसें पाप करताहै. फेर तिसका दंड देके जी

वोंकों दुखी करताहै. इस हेतुसेंही अन्यायी, निर्दयी, असमर्थ ईश्वर सिद्ध होताहै. इस वास्ते ईश्वर भगवंत किसीकों पुन्य पापका फल नही देताहै. इस चर्चाका अधिक स्वरुप देखनां होवे तो हमारा रचा हुआ जैनतत्वादर्शनामा पुस्तक बांचनां.

प्र. ११८—जब ईश्वर पुन्य पापका फल नही देता है, तो फेर पुन्य पापका फल क्योंकर जीवांको मिलताहै ?

उ.—जब जीव पुन्य पाप करतेहै तब तिनके फल भोगनेके निमित्तभी साथही होनेबाले बनाता करताहै, तिन निमित्तो द्वारा जीव शुभाशुभ कर्मोका फल भोगतेहै, तिन निमित्तोका नामही अज्ञ लोकोने ईश्वर रख छोडाहै.

प्र. ११९—जगतका कर्ता ईश्वर है के नही ?

उ.—जगततो प्रवाहसें अनादि चला आता है, किसीका मूलमें रचा हुआ नही है. काल १ स्वज्ञाव २ नियते ३ कर्म ४ चेतन आत्मा और जड पदार्थ इनके सर्व अनादि नियमोसें यह जगत विचित्ररूप प्रवाहसें चला हुआ उत्पाद व्यय ध्रुव रुपेसं इसी तरे चला जायगा.

प्र. १२०—श्री महावीरस्वामीए तीर्थंकरोकी प्रतिमा पूजनेका उपदेश कराहै के नही ?

उ.—श्री महावीरजीने, जिन प्रतिमाकी पूजा द्रव्ये और ज्ञावेतो गृहस्थकों करनी वतायि है और साधुयोंकों ज्ञावपूजा करनी वताइ है.

प्र. १२१—जिन प्रतिमाकी पूजा विना जिनकी ज्ञक्ति हो शक्तीहै के नही ?

उ.—प्रतिमा विना ज्ञगवंतका स्वरुप स्मरण नही हो शक्ताहै, इस वास्ते जिन प्रतिमा

विना गृहस्थलोकोसे जिनराजकी भक्ति नही हो सक्ती है.

प्र. १२२–जिन प्रतिमातो पाषाणादिककी बनी हुइहै, तिसके पूजने गुणस्तवन करनेसें क्या लाभ होताहै ?

उ.–हम पथ्थर जानके नही पूजतेहै, किन्तु तिस प्रतिमा द्वारा साक्षात् तीर्थंकर भगवंतकी पूजा स्तुति करतेहै. जैसे सुंदर स्त्रीकी तसवीर देखनेसे असल स्त्रीका स्मरण होकर कामी काम पीडित होताहै तैसेही जिन प्रतिमाके देखनेसें भक्तजनोको असली तीर्थंकरका रूपका स्मरण होकर भक्तोंका जिन भक्तिसें कल्याण होता है.

प्र. १२३–जिन प्रतिमाकी फूलादिसें पूजा करनेसें श्रावकोंको पाप लगताहै के नही ?

उ.–जिन प्रतिमाकी फूलादिसें पूजा कर-

नेसें संसारका क्षय करे, अर्थात् मोक्ष पद पावे; और जो किंचित् द्रव्य हिंसा होतीहै, सो कूपके दृष्टांतसें पूजाके फलसेही नष्ट होजातिहै, यह कथन आवश्यक सूत्रमेंहै.

प्र. १२४- सर्व देवते जैनधर्मी है ?

उ.-सर्व देवते जैनधर्मी नहीहै, कितनेकहै.

प्र. १२५-जैनधर्मी देवताकी भगती श्रावक साधु करे के नही ?

उ.-सम्यग् दृष्टी देवताकी स्तुति करनी जैनमतमें निषेध नही, क्योंकि श्रुत देवता ज्ञानके विघ्नोकों दुर करतेहै, सम्यग् दृष्टी देव तेधर्ममे होते विघ्नोकों दुर करतेहै, और कोइ भोला जीव इस लोकार्थके वास्ते सम्यग् दृष्टि देवतायोंका आराधन करेतो तिसकाभी निषेध नही है, साधुभी सम्यग दृष्टि देवताका आराधन स्तु-

ति जैनधर्मकी उन्नति तथा विघ्न दुर दूर करने वास्ते करेतो निषेध नही. यह कथन पंचाशकादि शास्त्रोंमें है.

प्र. १२६—सर्व जीव अपने करे हूए कर्मका फल भोगते है, तो फेर देव ते क्या कर-सक्के है.

उ.—जैसें अशुभ निमित्तोकें मिले अशुभ कर्मका फल उदय होता है, तैसे शुभ निमित्तोके मिलनेसें अशुभ कर्मोदय नष्टभी हो जाता है, इस वास्ते अशुभ कर्मोंके उदयकों दुर करनेमे देवताभी निमित्त है.

प्र. १२७—जैनधर्मी अथवा अन्यमति देवते विना कारण किसीकों दुख दे सक्के है के नही ?

उ.—जिस जीवके देवताके निमित्तसें अ-

शुभ कर्मका उदय होना है तिसकों; तो द्वेषादि कारणसे देवते दुख दे सक्तेहै, अन्यको नही.

प्र. १४०–संप्रतिराजा कौन था ?

उ.–राजगृह नगरका राजा श्रेणिक जिसका दुसरा नाम भंभसार था, तिसकी गद्दी ऊपर तिसका वेटा अशोकचंद्र दूसरा नाम कोणिक वैठा, तिसने चंपानगरीकों अपनी राजधानी करी, तिसकै मरां पिछे तिसकी गद्दी ऊपर तिसका वेटा उदायि वैठा, तिसने अपनी राजधानी पाडलीपुत्र नगरमें करी सो उदायि विना पुत्रके मरण पाया; तिसकी गद्दी उपर नायिका पुत्र नंद वैठा, तिसकी नव पेढीयोने नंदही नामसें राज्य करा, वे नव नंद कहलाए नवमें नंद की गद्दी उपर मौर्यवंशी, चंद्रगुप्तराजा वैठा, तिसकी गद्दी उपर तिसका पुत्र बिंदुसार वैठा,

तिसकी गद्दी ऊपर तिसका बेटा अशोकश्रीराजा बैठा, तिसका पुत्र कुणाल आंखासें अंधाथा इस वास्ते तिसकों राज गद्दी नही मिली, तिस कुणालका पुत्र संप्रति हुआ, सो जिस दिन जन्म्याथा तिस दिनही तिसकों अशोकश्री राजाने अपनी राज गद्दी ऊपर बैठाया, सो संप्रति नामे राजा हुआहै, श्रेणिक १ कोणिक २ उदायि ३ यह तीनो तो जैनधर्मी थे. नव नंदोकी मुफे खबर नही, कौनसा धर्म मानते थे. चंद्रगुप्त १ बिंदुसार ए दोनो जैनी राजे थे, अशोकश्रीभी जैनराजा था, पीछेसें केइक बौद्धमति हो गया कहतेहै, और संप्रति तो परम जैनधर्मीराजा था.

प्र. १२९—संप्रति राजाने जैनधर्मके वास्ते क्या क्या काम करेथे.

उ.—संप्रतिराजा सुहस्ति आचार्यका श्रा-

वक शिष्य १२ वारां व्रतधारी था; तिसने द्रविम्
अंध्र करणाटादि और काबुल कुराशानादि अना-
र्य देशोमें जैनसाधुयोका विहार करके तिनके उ
पदेशसें पूर्वोक्त देशोमें जैनधर्म फैलाया और नि-
नानवे ९९००० हजार जीर्ण जिन मंदरोंका उ-
द्धार कराया, और छव्वीस २६००० हजार नवी-
न जिनमंदिर बनवाए थे, और सवाकिरोम्
१२५००००० जिन प्रतिमा नवीन बनवाइ थी,
जिनके बनाए हूए जिनमंदिर गिरनार नम्रोलादि
स्थानोमे अबन्नी मौजूद खमेहै, और तिनकी ब-
नवाइ हुइ सैंकमो जिन प्रतिमान्नी महा सुंदर
विद्यमान कालमे विद्यमान है; और संप्रति राजा
ने ७०० सौ दानशाला करवाइ थी. और प्रजाके
महा हितकारी उपधशालादिन्नी बनवाइ थी,
इत्यादि संप्रतिराजाने जैनमतकी वृद्धि और प्र-

भावना करी थी. विरात् ४९१ वर्ष पीछे हुआ है,

प्र. १३०—मनुष्योंमे कोइ ऐसी शक्ति विद्यमानहै कि जिसके प्रभावसें मनुष्य अद्भुत काम कर सक्ताहै ?

उ.—मनुष्यमें अनंत शक्तियों कर्मोके आवरणसें ढंकी हुइहै, जेकर वे सर्व शक्तियां आवरण रहित हो जावेंतो मनुष्य चमत्कारी अद्भुत काम कर सक्तेहै.

प्र. १३१—वेशक्तियां किसने ढांक रखीहै ?

उ. आठ कर्मोकी अनंत प्रकृतियोने आछादन कर रखीहै.

प्र. १३२ हमनेतो आठ कर्मकी १४८ वा १५८ प्रकृत्तियां सुनीहै, तो तुम अनंत किस तरेसें कहते है ?

उ. — १४८ वा १५८ यह मध्य प्रकृ-

तियांके नेदहै, और उत्कृष्ट तो अनंत नेद है, क्योंके आत्माके अनंत गुणहै, तिनकै ढांकनेवालीयां कर्म प्रकृतियांनी अनंत है.

प्र. १३३–मनुष्यमें जो शक्तियां अद्भुत काम करनेवालीयांहै तिनका थोमासा नाम लेके बतलाउ, और तिनका किंचित् स्वरूपनी कहो, और यह सर्व लब्धियां किस जीवकों किस कालमें होतीयांहै ?

उ.–आमोसहि लद्धी १ जिस मुनिके हाथादिके स्पर्श लगनेसें रोगीका रोग जाए, तिसका नाम आमर्षोषधि लब्धि है, मुनि तिस लब्धिवाला कहा जाताहै, यह लब्धि साधुकोंही होती है.

विप्पोसही लद्धी २– स साधुके मलमूत्रके लगनेसें रोगीका रोग जाए, तिसका नाम

विट्पोषधि लब्धि है, इस लब्धिवाले मुनिका मल, विष्टा और मूत्र सर्व कर्प्पूरादिवत् सुगंधिवाला होता है, यह लब्धि साधुकोंही होतीहै.

खलोसहि लद्धी ३–जिस साधुका श्लेष्म थूंकही उषधिरूप है, जिस रोगीके शरीरकों लग जावेतो तत्काल सर्व रोग नष्ट हो जावे, यह सुगंधित हौताहै, यह लब्धि साधुकों होती है, इसकों श्लेष्मोषधि लब्धि कहतेहै.

जल्लोसहि लद्धी ४–जिस साधुके शरीरका पसीना तथा मैलभी रोग दूर कर सके, तिसकों जल्लोषधि लब्धि कहते है, यहभी साधुकोंही होती है.

सधोसहि लद्धी ५ जिस साधुके मलमूत्र केश रोम नखादिक सर्वौषधि रूप हो जावे सर्व रोग दूर कर सकें, तिसको सर्वौषधि लब्धि कह

तेहै, यह साधुकों होतीहै.

संभिन्नासोए लद्धी ६–जो सर्व इंद्रियोंसे सुणे, देखे, गंध सूंघे, स्वाद लेवे, स्पर्श जाणे एकैक इंद्रियसें सर्व इंद्रियांकी विषय जाणे अथवा बारा योजन प्रमाण चक्रवर्तिकी सेनाका पड़ाव होताहै, तिसमे एक साथ वाजते हुए सर्व वाजत्रेकों अलग अलग जान सके तिसको संभिन्न श्रोत्र लब्धि कहतेहै, यह साधुकों होती है.

उहिनाण लद्धी ७–अवधिज्ञानवंतको अवधिज्ञान लब्धि होती है, यह चारो गतिके जीवांको होतीहै, विशेष करके साधुकों होतीहै.

रिजमइ लद्धी ८–जिस मनः पर्यायज्ञानसें सामान्य मात्र जाणें; जैसें इस जीवने मनमें घट चिंतन कराहै इतनाही जाणे, परंतु ऐसा न जानकि वैसा घट किस क्षेत्रका उत्पन्न हूआ किस

कालमें उत्पन्न हुआहै; अथवा अढाइ द्वीपके मनुष्योके मनके बादर परिणामा जाणे तिसको रूजु मति लब्धि कहते है, यह निश्चय साधुकों होतीहै अन्यकों नही.

विपुलमइ लद्धी ए—जिस मनः पर्यायसे रूजुमतिसें अधिक विशेष जाणें, जैसें इसने सोनेका घट चिंतन कराहै, पाडलिपुत्रका उत्पन्न हूआ वसंतरुतुका अथवा अढाइ द्वीपके संज्ञी जीवांके मनके सूक्ष्म पर्यायांकोंभी जाणे, तिसकों विपुलमति लब्धि कहतेहै, इसका स्वामी साधुही होवे यह लब्धि केवल ज्ञानके विना हुआ जाए नही.

चारण लद्धी १०—चारण दो तरेके होतेहै, एक जंघा चारण १ दूसरा विद्या चारण १ जंघा चारण उसकों कहतेहै जिसकी जंघायोमें आका-

शमें उड़नेकी सक्ति उत्पन्न होवे सो ऊंधा चार ण. ऊंचातो मेरु पर्वतके शिखर तक उड़के जा-सक्ताहै, और तिरछा तेरमे रूचक द्वीप तक जा-सकताहै, और विद्याचारण ऊंचा मेरु शिखरतक और तिरछा आठमें नंदिश्वर द्वीप तक विद्याके प्रभावसें जा सक्ताहै. येह दोनो प्रकारकीं लब्धि-कों चारण लब्धि कहतेहै, यह साधुकों होतीहै

आसीविष लब्धी ११–आशी नाम दाढाका है; तिनमें जो विष होवे सो आशीविष. सो दो प्रकारेहै, एक जाति आशीविप दूसरा कर्म आ-शीविप, तिनमें जाति जहरीके चार भेद है. विछु १ सर्प २ मींडक ३ मनुष्य ४ और तप क-रनेसें जिस पुरुपको आशीविप लब्धि होती है सो शाप देके अन्यको मार सक्ताहै, तिसकोंभी आशीविष लब्धि कहतेहै.

केवल लद्धी १२—जिस मनुष्यको केवल ज्ञान होवे, तिसकों केवल नामे लब्धि है.

गणहर लद्धी १३—जिससें अंतर मुहूर्त्तमें चौदह पूर्व गूंथे और गणधर पदवी पामे, तिसकों गणधर लब्धि कहते है.

पुव्वधर लद्धि १४ जिससें चौदह पूर्व दश पूर्वादि पूर्वका ज्ञान होवे, सो पूर्वधर लब्धि.

अरहंत लद्धी १५—जिससें तीर्थंकर पद पावे, सो अरहंत लब्धि.

चक्कवट्टि लद्धी १६—चक्रवर्त्तीकों चक्रवर्त्ती लब्धि.

बलदेव लद्धी १७—बलदेवकों बलदेव लब्धि.

वासुदेव लद्धी १८—वासुदेवकों वासुदेवकी लब्धि.

खीरमहुसप्पिआसव लद्धी १९—जिसके

वचनमें ऐसी शक्तिहै कि तिसकी वाणी सुणके श्रोता ऐसा तुप्त हो जावेके मानु दूध, घृत, शाकर, मिसरीके खानेसे तृप्त हुआहै, तिसको खीर मधुसर्पि आसव लब्धि कहते है, यह साधुको होती है.

कुठय बुद्धि लब्धी १०—जैसे वस्तु कोठेमें पड़ी हुइ नाश नही होतीहै, ऐसेही जो पुरुष जितना ज्ञान शीखे सो सर्व वैसेका तैसाही जन्मपर्यंत भूले नही; तिसका कोष्टक बुद्धि लब्धि कहेत है.

पयाणुसारी लब्धी ११— एक पद सूननेसे संपूर्ण प्रकरण कह देवे; तिसको पदानुसारी लब्धि कहते है.

वीयबुद्धि लब्धी १२— जैसे एक बीजसे अनेक बीज उत्पन्न होतेहै; तैसेही एक वस्तुके स्व

रूपके सुननेसे जिसको अनेक प्रकारका ज्ञान होवे, सो बीजबुद्धि लब्धि है.

तेउलेसा लद्धी २३–जिस साधुके तपके प्रभावसें ऐसी शक्ती उत्पन्न होवेके जेकर क्रोध चढे तो मुखके फुंकारेसें कितनेही देशांको बालके भस्म कर देवे, तिसको तेजोलेश्या लब्धि कहते है.

आहारए लद्धी २४–चउदह पूर्वधर मुनि तीर्थंकरकी रुद्धि देखने वास्ते, १ वा कोइ अर्थ अवगाहन करने वास्ते अथवा अपना संशय दूर करने वास्ते अपने शरीरमें हाथ प्रमाण स्फटिक समान पूतला काढके तीर्थंकरके पास भेजताहै तिस पूतलेसें अपने कृत्य करके पाछा शरीरमें संहार लेताहै तिसका आहारक लब्धि कहतेहै,

सीयलेसा लद्धी २५–तपके प्रभावसें मु-

निकों ऐसी शक्ति उत्पन्न होतीहै के जिससें तेजो लेश्याकी उष्णताकों रोक देवे, वस्तुकों दग्ध न होने देवे, तिसकों शीतलेशा लब्धि कहते है.

वैक्रियदेह लब्धि २६ जिसकी सामर्थसें अणुकी तरें सूक्ष्म कण मात्रमें हो जावे, मेरुकी तरें भारी देह कर लेवे, अर्क तुलकी तरें लघु हलका देह कर लेवे, एक वस्त्रमेंसें वस्त्र करोमों और एक घटमेंसें घट करोमों करके दिखला देवे, जैसा इछे तैसा रुप कर सके, अधिक अन्य क्या कहिये, तिसका नाम वैक्रिय लब्धि है.

अक्षीणमहाणसी लब्धि २७–जिसके प्रभावसें जिस साधुनें आहार आणाहै, जहां तक सो साधु न जीमे तहां तक चाहो कितनेही साधु तिस भिक्षामेंसे आहार करे तोभी खूटे नही, तिसकों अक्षीणमहानसिक लब्धि कहते है.

पुलाय लब्धी २८—जिसके प्रभावसें धर्मकी रक्षा करने वास्ते धर्मका द्वेषी चक्रवर्त्यादिकों सेना सहित चुर्ण कर शके, तिसकों पुलाकलब्धि कहते है.

पूर्वोक्त येह लब्धीयां पुन्यके और तपके और अंतःकरणके वहुत शुद्ध परिणामोके होनेसें होतेहे, ये सर्व लब्धियां प्रायें तीसरे चौथे आरेमेही होतीयांहै, पंचम आरेकी शरूआतमेंभी होतीयां है.

प्र. १३४—श्री महावीरस्वामीकों ये पूर्वोक्त लब्धियां २८ अठावीस थी ?

उ.—श्री महावीरजीकोंतो अनंतीयां लब्धियां थी. येह पूर्वोक्ततो २८ अठावीस किस गिनतीमेंहै, सर्व तीर्थंकराकों अनंत लब्धियां होतीहै.

प्र. १३५—इंद्रभूति गौतमकों ये सर्व ल-

ब्धियां थी ?

उ. चक्री, वलदेव, वासुदेव रुजुमति, ये नही थी शेष प्राये सर्वही लब्धियां थी.

प्र. १३६–आप महावीरकोंही भगवंत सर्वज्ञ मानतेहो, अन्य देवोंकों नही, इसका क्या कारणहै ?

उ.–अपने २ मतका पक्षपात छोडके विचारीये तो, श्री महावीरजीमेंही भगवंतके सर्व गुण सिद्ध होतेहै, अन्य देवोमें नही.

प्र. १३७–श्री महावीरजीकों हुएतो वहुत वर्ष हुएहै, हम क्योंकर जानेके श्री महावीरजीमेंही भगवानपणेके गुण थे, अन्य देवोमें नही थे ?

उ.- सर्व देवोंकी मूर्त्तियां देखनेसें और तिनके मतोमें तिन देवोंके जो चरित्त कथन करेहै तिनके वांचने और सुननेसें सत्य भगवंतके लक्ष

ण और कल्पित नगवंतोंके लक्षण सर्व सिद्धहो जावेग.

प्र.—१३८ कैसी मूर्त्तिके देखनेसें नगवंतकी यह मूर्त्ति नही है, ऐसे हम माने ?

उ. जिस मूर्त्तिके संग स्त्रीकी मूर्त्ति होवे तब जाननाके यह देव विषयका नोगी था. जिस मूर्त्तिके हाथमें शस्त्र होवे तब जानना यह मूर्त्ति रागी, द्वेषी वैरीयोंके मारने वाले और असमर्थ देवोकी है. जिस मूर्त्तिके हाथमें जपमाला होवे तब जानना यह किसीका सेवक है, तिससें कुछ मागने वास्ते तिसकी माला जपता है.

प्र. १३ए परमेश्वरकी कैसी मुर्त्ति होतीहै ?

उ.—स्त्री, जपमाला, शस्त्र, कमण्डलुसें रहित, और शांत निस्पृह ध्यानारूढ समता मतवारी शांतरस मग्न,मुख विकार रहित, ऐसी सच्चे

देवकी मुर्त्ति होती है.

प्र. १४० जैसे तुमनें सर्वज्ञकी मुर्त्तिके लक्षण कहेहै, तैसें लक्षण प्राये बुद्धकी मुर्त्तिमेंहै, क्या तुम बुद्धको भगवंत सर्वज्ञ मानतेहो ?

उ.—हम निकेवल मुर्त्तिकेही रूप देखनेसें सर्वज्ञका अनुमान नही करतेहे, किंतु जिसका चरितभी सर्वज्ञके लायक होवे, तिसकों सच्चा देव मानते हे.

प्र. १४१ क्या बुद्धका चरित सर्वज्ञ सच्चे देव सरिखा नहीहै ?

उ. बुद्धके पुस्तकानुसार बुद्धका चरित सर्वज्ञ सरीखा नही मालुम होताहै.

प्र. १४२ बुद्धके शास्त्रोमें बुद्धका किसतरेंका चरित है, जिससें बुद्ध सर्वज्ञ नहीहै ?

उ.—बुद्धका बुद्धके शास्त्रानुसारे यह चरित

जो आगे लिखतेहै, तिसें बुद्ध सर्वज्ञ नही सिद्ध होता है. १ प्रथम बुद्धने संसार छोडके निर्वाणका मार्ग जानने वास्ते योगीयांका शिष्य हुआ, वे-योगी जातके ब्राह्मणथे और तिनकों बडे ज्ञानी भी लिखाहै. तिनके मतकी तपस्यारूप करनीसें बुद्धका मनोर्थ सिद्ध नही हुआ, तब तीनको छो-डके बुद्ध गयाके पास जंगलमे जा रहा २, इस उपरके लेखसेतो यह सिद्ध होता है कि बुद्ध कोइ ज्ञानी बुद्धीमान्तो नही था, नहीतो तिनके म-तकी निष्फल कष्ट क्रिया काहेको करता, और गुरुयोंके छोडनेसें स्वछंदचारी अविनीतभी इसी लेखसें सिद्ध होताहै १ पीछे बुद्धने उग्र ध्यान और तप करनेमे कितनेक वर्ष व्यतीत करे २ इस लेखसें यह सिद्ध होताहै कि जब गुरूयोकों छोडा निकम्मे जानके तो फेर तिनका कथन करा हुआ

उग्र ध्यान और तप निष्फल काहेको करा, इस सेंभी तप करता हुआ, जब मुर्गा खाके पमा तहा तकभी अज्ञानी था, ऐसा सिद्ध होता है ? पीछे जब बुद्धने यह विचार कराके केवल तप करनेसें ज्ञान प्राप्त नही होताहै, परंतु मनके उघाम्न करनेसें प्राप्त करना चाहिए, पीछे तिसने खानेका निश्चय करा ओर तप छोमा २ जब ध्यान और तप करनेसें मन न उघामा तो क्या खानेसें मन उघम्न शकताहै, इससें यहभी तिसकी समझ असमंजस सिद्ध होती है १ पीछे अजपाल वृक्षके हेठे पूर्व तर्फ वैठके इस्ने ऐसा निश्चय कराके जहां तक मै बुद्ध न होवांगा तहां तक यह जगा न छोमुंगा, तिस रात्रिमें इसकों इछारोध करनेका मार्ग और पुनर्जन्मका कारण और पूर्व जन्मांतरोका ज्ञान उत्पन्न हुआ, दूसरे दिनके सवे-

रेके समय इसका मन परिपूर्ण जधया और स-र्वोपरि केवलज्ञान उत्पन्न हुआ २ अब विचारीये जिसने उग्रध्यान और तप छोड दीया और नित्यप्रते खानेका निश्चय करा तिसका निर्हेतुक इन्द्रीरोध करनेका और पुनर्जन्मके कारणोंका ज्ञान कैसें हो गया, यह केवल अपौक्तिक कथनहै. मोग्गलायन और शारिपुत्र और आनंदकी कल्पना सें ज्ञानी लोकोमें प्रसिद्ध हुआहै १, बुद्धने यह कथन करा है. आत्मा नामक कोइ पदार्थ नही है आत्मातो अज्ञानियोने कल्पना करा हैं २ जब बुद्धने ज्ञानमें आत्मा नही देखा तब केवलज्ञान किसकों हुआ, और बुद्धने पुनर्जन्मका कारण किसका देखा; और पूर्व जन्मांतर करने वाला किसकों देखा, और पुन्य पापका कर्त्ताभुक्ता किसकों देखा, और निर्वाण पद किसकों हूआ देखा,

जेकर कोइ यह कहेके नवीन नवीन क्षणकों पिछले २ क्षणोकी वासना लगती जाती है, कर्त्ता पिछला क्षणह; और मोक्ष अगला क्षणहै मोक्ष का साधन तो अन्य क्षणने करा, और मोक्ष अगले क्षणकी हुइ, निर्वाण उसकों कहतेहै कि जो दीपककी तरें क्षणोका बुझ जाना, अर्थात् सर्व क्षण परंपरायका सर्वथा अभाव हो जाणा, अथवा शुद्ध क्षणोकी परंपराय रहती है. पांच स्कंधोसें वस्तु उत्पन्न होती है, पांचो स्कंधभी क्षणि कहै, कारण कार्य एक कालमे नही है, इत्यादि सर्व बौद्ध मतका सिद्धांत अयौक्तिक है १ बुद्धके शिष्य देवदत्तने बुधको मांस खाना छुमानेके वास्ते बहुत उपदेश करा. परंतु बुद्धने नमाना, अंत मेंभी सूयरका मांस और चावल अपने भक्तके घरसें लेके खाया, और वेदना ग्रस्त होकरके मरा,

और पाणीके जीव बुद्धकों नही दीखे तिशसें कच्चे पानीके पीने और स्नान करनेका उपदेश अपने शिष्योंकों करा, इत्यादि असमंजस मतके उपदेशकका हम क्यों कर सर्वज्ञ परमेश्वर मान सके जो जो धर्मके शब्द बौद्ध मतमें कथन करे है वे सर्व शब्द ब्राह्मणोके मतमेंतो है नही, इस वास्ते वे सर्व शब्द जैन मतसें लीयेहै बुद्धसें पहिलें जैनधर्म था. तिसका प्रमाण हम उपर लिख आए है बुद्धके शिष्य मौद्गलायन और शारिपुत्रन श्री महावीरके चरितानुसारी बुद्धका सर्वसें ऊंचा करके कथन करा सिद्ध होताहै, इस वास्तें जैन मतवाले बुद्धके धर्मकों सर्वज्ञका कथन करा हुआ नही मानते है.

प्र, १४३–कितनेक युरोपीयन विद्वान् ऐसें कहतेहै कि जैन मत ब्राह्मणोंके मतमेंसे लीयाहै,

अर्थात् ब्राह्मणोंके शास्त्रोकी वाता लेके जैन मत रचा है ?

उ.—युरोपीयन विद्वानोने जैनमतके सर्व पुस्तक वांचे नही मालुम होतेहै, क्योंकि जेकर ब्राह्मणोके मतमें अधिक ज्ञान होवे और जैन-मतमें तिसके साथ मिलता थोडासा ज्ञान होवे, तब तो हमभी जैनमत ब्राह्मणोके मतसें रचा ऐसा मान लेवे, परंतु जैनमतका ज्ञानतो ब्राह्मणादि सर्व मतोके पुस्तकोंसें अधिक और विलक्षणहै, क्योंकि जैनमतके छेद पुस्तक और कर्मो के स्वरुप कथन करनेवाले कर्म प्रकृति, १ पंच संग्रह, २ षट्कर्म ग्रंथादि पुस्तकोंमें जैसा ज्ञान कथन करा है, तैसा ज्ञान सर्व दुनियाके मतके पुस्तकोंमे नहीहै, तो फेर ब्राह्मणोके मतके ज्ञान सें जैन मत रचा क्योंकर सिद्धहोवे, बलको यह

तो सिद्धजी हो जावेके सर्व मतोमें जो जो सूक्त वचन रचना है वे सर्व जैनके द्वादशांग समुद्रकेही विंदु सर्व मतोमे गये हुएहै. विक्रमादित्य राजेके प्रोहितका पुत्र मुकंदनामा चार वेदादि चौदह विद्याका पारगामी तिसने वृद्धवादी जैनाचार्यके पास दीक्षा लीनी. गुरुने कुमुदचंद्र नाम दीना और आचार्यपद मिलनेसें तिनका नाम सिद्धसेन दिवाकर प्रसिद्ध हुआ, जिनके नाम कवि कालीदासने अपने रचे ज्योतिर्विदाभरण ग्रंथमें विक्रमादित्यकी सभाके पंडितोंके नाम लेतां श्रुतसेन नामसें लिखाहै, तिनोनें अपने रचे बत्तीस बत्तीसी ग्रंथमें ऐसा लिखाहै, सुनिश्चितं नःपरतंत्र युक्तिषु ॥ स्फुरंतिया कश्चिन्सुक्तिसंपदः ॥ तवैवताः पूर्वमहार्णवोछता ॥ जगत्प्रमाणं जिनवाक्य विप्रुष ॥१॥ उदधाविव सर्व संधव ॥ समुद्दीरणा

त्वयि नाथ दृष्ठयः ॥ नचतासु भवान्प्रदृश्यते ॥ प्रविभक्त सरित्स्विवोदधिः ॥२॥ प्रथम श्लोकका भावार्थ ऊपर लिख आएहै, दूसरे श्लोकका भावार्थ यह है, कि समुद्रमें सर्व नदीयां समा सक्ती है, परंतु समुद्र किसीभी एक नदीमें नही समा सक्ता है, तैसे सर्व मत नदीयां समान है, वैतो सर्व स्याद्वाद समुद्ररुप तेरे मतमे समा सक्ते है, परंतु तेरा स्याद्वाद समुद्ररुप मत किसी मतमेंभी संपूर्ण नही समा सक्ता है, ऐसेहीश्रीहरिभद्रसूरिजी जो जातिके ब्राह्मण और चित्रकूटके राजाके प्रोहित थे और वेद वेदागांदि चौद्द ह विद्याके पारगामी थे, तिनोनें जैनकी दीक्षा लेके १४४४ ग्रंथ रचेहै, तिनोनेभी उपदेशपद षोमश कादि प्रकरणोमें सिद्धसेन दिवाकरकी तरेही लिखाहै तथा श्री जिनधर्मी हुआ पीछे जानाहै, जि

सने शैवादि सकल दर्शन और वेदादि सर्व मतों
के शास्त्र ऐसे पंडित धनपालने जोके भोजराजा
की सभामें मुख्य पंडित था, तिसने श्री ऋष-
भदेवकी स्तुतिमें कहाहै, पावंति जसं असमंज-
सावि, वयणेहिं जेहि पर समया, तुह समय
महो अहिणो, ते मंदा बिंदु निस्संदा ॥ १ ॥ अ-
स्यार्थः ॥ जैनमतके विना अन्य मतके असमंज
स वचनरूप शास्त्र जो जगमें यशकों पावें है जै
नसें वचनोसें वे सर्व वचन तेरे स्याद्वादरुप महो-
दधि के अमंद बिंदु उरूके गए हुएहै. इत्यादि सैंक
ड़ो चार वेद वेदांगादिके पाठीयोंनें जैनमतमें दी
क्षा लीनीहै, क्याउन सर्व पंडितोकों बौद्धायनादि
धु...
रते हुआंको नही मालुम पड़ा होगा के
तां: पूव
दि शास्त्र जैनमतके वचनोसें रचे गये
विभुष ॥१
मत बौद्धायनादि शास्त्रोंसें रचा गया

है, जेकर कोइ यह अनुमान करके श्री महावीर जीसें बौधायनादि शास्त्र पहिले रचे गएहै, इस वास्ते जैनमतपीछेसें हुआहै, यह माननाभी ठीक नही क्योंकि श्री माहावीरजीसें २५० वर्ष पहिलें श्री पार्श्वनाथजी और तिनसें पहिले श्री नेमिनाथादि तीर्थंकर हुएहै, तिनके वचन लेके बौधायनादि शास्त्र रचे गएहै, जैनी ऐसें मानतेहै, जेकर कोइ ऐसें मानता होवेकिजैनमत थोमाहै और ब्राह्मणमत वहुतहै, इस वास्ते थोमे मतसें वडा मत रचा क्यों कर सिद्धहोवे; यह अनुमान अतीत कालकी अपेक्षाए कैसा मानना ठीक नही, क्योंकि इस हिंदुस्तानमें वुद्धके जीते हुए वुद्धमत विस्तारवंत नही था, परंतु पीछेसे ऐसा फैलाके ब्राह्मणोका मत वहुतही तुछ रह गया था; इसी तरे कोइ मत किसी कालमे अधिक हो जाता है,

और किसी कालमे न्यून हो जाता है इस वास्ते थोमा और बमा मत देखके थोमे मतको बमेसे रचा मानना ये अनुमान सच्चा नही है; भट्ट मे क्समुलरने यह जो अनुमान करके, अपने पुस्तक में लिखाहै कि वेदोंके छंदोभाग और मंत्रभागके रचेकों २९०० वा ३१०० सौ वर्ष हुएहै; तो फेर बौधायनादि शास्त्र बहुत पुराने रचे हुए क्योंकर सिद्ध होवेगें; इस वास्ते अपने मनकल्पित अनुमानसें जो कल्पना करनी सो सर्व सत्य नहीहो शक्ती है, इस वास्ते अन्य मतोमें जो ज्ञान है सो सर्व जैन मतमें है, परंतु जैनमतका जो ज्ञानहै सो किसी मतमें सर्व नही है; इस वास्ते जैन मतके द्वादशांगोकेही किंचित वचन लेकेलोकोने मनकल्पित उसमें कुछ अधिक मिलाके मत रच लीनेहै; हमारे अनुमानसेंतो यही सिध्ध होता है.

प्र. १४४–कोइ युरोपीयन विद्वान् ऐसे कहताहै कि बौद्धमतके पुस्तक जैनमतसें चढतेहै ?

उ.–जेकर श्लोक संख्यामे अधिक होवे अथवा गिनतिमें अधिक होवे अथवा कवितामें अधिक होवे तबतो अधिकता कोइ माने तो हमारी कुछ हानि नहीहै, परंतु जेकर ऐसें मानना होवेके बौद्ध पुस्तकोंमें जैन पुस्तकोंसें धर्मका स्वरूप अधिक कथन करा है, यह मानना बिलकुल भूल संयुक्त मालुम होताहै, क्योंकि जैन पुस्तकोंमें जैसा धर्मका रूप और धर्म नीतिका स्वरूप कथन कराहै, वैसा सर्व दुनीयाके पुस्तकोंमें नही है.

प्र. १४५–जैनके पुस्तक बहुत थोडे है, और बौधमतके पुस्तक बहुत है, इस वास्ते अधिकता है ?

उ.—संप्रति कालमें जो जैनमतके पुस्तकहै वे सर्व किसी जैनीनेभी नही देखेहै, तो यूरोपीयन विद्वान कहांसे देखे; क्योंकि पाटन और जैसलमेरमें ऐसे गुप्त भंडार पुस्तकोंके है कि वे किसी इंग्रेजनेभी नही देखे है, तो फेर पूर्वोक्त अनुमान कैसें सत्य होवे.

प्र. १४६—जैनमतके पुस्तक जो जैनी रखते है सो किसीकों दिखाते नही है, इसका क्या कारण है ?

उ.—कारणतो हमकों यह मालुम होताहै कि मुसलमानोंकी अमलदारीमें मुसलमानोने बहुत जैनमतोपरि जुल्म गुजारा था, तिसमें सैंकडो जैनमतके पुस्तकोंके भंडार बाल दीये थे, और हजारो जैनमतके मंदिर तोडके मसजिदे बनवा दीनी थी. कुतब दिल्ली अजमेर जुनागढके

किलेमें प्रन्नास पाटणमें रांदेर, न्नरूचमें इत्यादि वहुत स्थानोंमें जैनमंदिर तोमके मसजिदो वनवाइ हुइ खमी है, तिस दिनके मरे हुए जैनि किसीकोन्नी अपने पुस्तक नही दिखाते है, और गुप्त न्नंमारोंमे वंध करके रख गोमेहै.

प्र, १४३–इस कालमें जो जैनी अपने पुस्तक किसीकों नंही दिखातेहै, यह काम अज्ञा है वा नही ?

न्न.–जो जैनी लोक अपने पुस्तक वहुत यत्नसें रखतेहै यहतो वहुत अज्ञा काम करते है, परंतु जैसलमेरमें जो न्नंमारके आगे पथ्थरकी न्नीत चिनके न्नंमार वंध कर गोमा है, और कोइ न्नसकी खवर नही लेता है, क्या जाने वे पुस्तक मट्टी हो गयेहैके शेष कुछ रह गयेहै, इस हेतुसें तो हम इस कालके जैन मतीयोंको वहुत

नालायक समझते है.

प्र. १४८—क्या जैनी लोकोंके पास धन न हीहै, जिससें वे लोक अपने मतके अति उत्तम पुस्तकोंका उद्धार नही करवाते है ?

उ.—धनतो बहुतहै, परंतु जैनी लोकोंकी दो इंद्रिय बहुत जबरदस्त हो गइहै, इस वास्ते ज्ञान भंडारकी कोइभी चिंता नही करताहै.

प्र. १४९—वे दोनो इंद्रियो कौनसी है जो ज्ञानका उद्धार नही होने देती है?

उ.—एकतो नाक और दुसरी जिव्हा, क्यों- कि नाकके वास्ते अर्थात् अपनी नामदारीके वास्ते लाखों रूपइये लगाके जिन मंदिर बनवाने चले जातेहै, और जिव्हाके वास्ते खानेमे लाखों रूपइये खरच करतेहै, चूरमेआदिकके लडुयोंकी खबर लीये जातेहै, परंतु जीर्णभंडारके उद्धार

करणेकी वाततो क्या जाने, स्वप्नमेंभी करते होवेंगेके नही.

प्र. १५०—क्या जिन मंदिर और साहम्मि वछल करनेमें पापहै, जो आप निषेध करतेहो ?

उ.—जिन मंदिर वनवानेका और साहम्मिवछल करनेका फलतो स्वर्ग और मोक्षकाहै, परंतु जिनेश्वर देवनेतो ऐसे कहाकि जो धर्मक्षेत्र विगमता होवे तिसकी सार संभाल पहिले करनी चाहिये; इस वास्ते इस कालमें ज्ञान भंमार विगमताहै. पहिले तिसका उद्धार करना चाहिये. जिन मंदिरतो फेरभी वन शकतेहै, परंतु जेकर पुस्तक जाते रहेगे तो फेर कोन वना सकेगा.

प्र. १५१—जिन मंदिर वनवाना और साहम्मिवछल करना, किस रीतका करना चाहिये ?

उ.—जिस गामके लोक धनहीन होवें, जिन

मंदिर न बना सकें, और जिन मार्गके भक्त होवे, तिस जगे आवश्य जिन मंदिर करानां चाहिये, और श्रावकका पुत्र धनहीन होवे तिसकों किसी का रोजगारमें लगाके तिसके कुटुंबका पोषणहोवे ऐसे करे, तथा जिस काममें सीदाता होवे तिसमें मदत करे. यह साहम्मिवछलहै, परंतु यह न समझनांके हम किसी जगे जिन मंदिर बनानेकों और बनिये लोकोंकें जिमावने रूप साहम्मिवछ्लका निषेध करतेहै, परंतु नामदारीके वास्ते जिन मंदिर बनवानेमें अल्प फल कहते है, और इस गामके बनीयोने उस गामके बनियोंकों जिमाया और उस गामवालोंने इस गामके बनियोंकों जिमाया, परंतु साहम्मिकों साहाय्य करनेकी बुद्धिसें नही, तिसकों हम साहम्मिवछल नही मानते है, किंतु गधें खुरकनी मानते है.

प्र. १५१–जैनमततो तुमारे कहनेसें हमको वहुत उत्तम मालुम होताहै, तो फेर यह मत्त वहुत क्यों नही फैलाहै ?

उ.–जैनमतके कायदे ऐसे कठिन है कि तिन उपर अल्प सत्ववाले जिव वहुत नही चल सक्तेहै. गृहस्थका धर्म और साधुका धर्म वहुत नियमोंसें नियंत्रितहै, और जैनमतका तत्व तो वहुत जैन लोकभी नही जान सक्तेहै, तो अन्य मतवालोंको तो वहुतही समझना कठिनहै, बौद्ध मतके गोविंदआचार्यनें भरुचमें जैनाचार्यसें चरचामें हार खाइ, पीछे जैनके तत्व जानने वास्ते कपटसे जैनकी दीक्षा लीनी. कितनेक जैनमतके शास्त्र पढके फेर बौद्ध वन गया, फेर जैनाचार्यों के साथ जैनमतके खंमन करनेमें कमर वांधके चरचा करी, फेरभी हारा, फेर जैनकी दीक्षा

लीनी, फेर हारा इसीतरें कितनी वार जैनशास्त्र पढे; परंतु तिनका तत्व न पाया, पिछली विरीया तत्व पाया तो फेर बौद्ध नही हुआ. जैनमत समजनां और पालना दोनो तरेसें कठिन है इस वास्ते बहुत नही फैला है, किसी कालमें बहुत फैलाभी होवेगा, क्या निषेध है इसीतरे मीमांसाका वार्त्तिककार कुमारिल भट्टने और किरणावलिके कर्त्ता उदयननेभी कपटसें जैन दीक्षा लीनी, परंतु तत्व नही प्राप्त हुआ.

प्र. १५३–जैनमतमें जो चौदहपूर्व कहे जातेहै, वे कितनेक बडेथे और तिनमें क्या क्या कथन था. इसका संक्षेपसें स्वरुप कथन करो?

उ.–इस प्रश्नका उत्तर अगले यंत्रसें देख लेनां.

पूर्व नाम	पद संख्या	शाहीलिख नेमें कितनी	विषय क्या है.
उत्पाद पूर्व १	एक करोड पद १००००००	१ एकहाथी जितने शाहीके ढेरमें लिखा जावे	सर्व द्रव्य और सर्व पर्यायांकी उत्पत्तिका स्वरूप कथन करा है.
आग्रायणीपूर्व २	९६०००० छानवेलाख पद.	२हाथी प्रमाण शाहीसें एवं सर्वत्र.	सर्व द्रव्य और सर्व पर्याय और सर्व जीव विशेषांके प्रमाणका कथन है.
वीर्यप्रवादपूर्व ३	सित्तरलाख पद. ७००००००	४ हाथी प्रमाण.	कर्म सहित और कर्म रहित सर्व जीवांका और सर्व अजीव पदार्थोंके वीर्य अर्थात् शक्तिके स्वरुपका कथन हैं.
अस्ति नास्ति प्रवाद पूर्व ४.	साठलाख पद. ६००००००	८ हाथी प्रमाण.	जो लोकमें धर्मास्ति कायादि अस्तिरुप है और जो खर शृंगादि नास्तिरुप है तिसका कथन है अथवा

			सर्व वस्तु स्वरूप करके अस्तिरूप है और पररूप करके नास्तिरूप है ऐसा कथन है.
ज्ञान प्रवाद पूर्व ५	एक करोड पद १००००००० एक पद न्यून	१६ हाथी प्रमाण.	पांचो ज्ञान मति आदि तिनका महा बिस्तारसें कथन है.
सत्य प्रवाद पूर्व ६	एक करोड पद १००००००६ ६ पद अधिक	३२ हाथी प्रमाण.	सत्य संयम वचन इन तीनोका बिस्तारसें कथन है.
आत्मप्रवादपूर्व ७	छव्वीस करोड पद. २६०००००००	६४ हाथी प्रमाण.	आत्मा जीव तिसका सातसौं ७०० नयके मतोंसें स्वरूप कथन करा है.
कर्म्म प्रवाद पूर्व ८	एक करोड असी हजार १००८००००	१२८ हाथी प्रमाण.	ज्ञानावरणीयादि अष्ट कर्मका प्रकृति स्थिति अनुभावप्रदेशादिसें स्वरूपका कथनकरा है.
प्रत्याख्यान प्रवाद	चोराशी लाख पद. ८४०००००	२५६ हाथी प्रमाण.	प्रत्याख्यान त्यागने योग्य वस्तुयोका और त्यागका बिस्तारसें कथन क-

९			रा है.
विद्यानुप्रवादपूर्व १०	एक करोड दश लाख पद ११००००००	५१२ हाथी प्रमाण.	अनेक अतिशयवंत चमत्कार करनेवाली अनेक विद्यायोंका कथन है,
अवंध्य पूर्व ११	छव्वीस करोड पद. २६०००००००	१०२४ हाथीं प्रमाण	जिसमें ज्ञान, तप, संयमादिका शुभ फल और सब प्रमादादि पापोंका अशुभ फल कथन करा है.
प्राणायु पूर्व १२	एक करोड पंचाश लाख पद. १५००००००	२०४८ हाथीं प्रमाण.	पांच इंद्रिय और मनबल, वचनबल, कायाबल, और उच्छ्वास निःश्वास और आयु इन दशो प्राणाका जहां विस्तारमें स्वरूप कथन करा है.
क्रिया विशाल पूर्व १३	नव करोड पद. ९०००००००	४०९६ हाथी प्रमाण. शाहीसें लिखा जावे.	जिसमें कायक्यादि क्रिया वा संयमाक्रिया छंद्रक्रियादि क्रियायोंका कथन है.

लोक विं दुसार पूर्व १४	साढेबारा क रोड पद. १२५:०००००	८१९२ हा थी प्रमाण.	लोकमें वः श्रुतज्ञान लोकमें अक्षरोपरि बिंदू समान सार सर्वोत्तम सर्वाक्षरो के मिलाप जाननेकी लब्धिका हेतु जिसमें है.

प्र. १५४—जैनमतके पंच परमेष्टिकी जगे प्राचीन और नवीन मत धारीयोनें अपनी बुद्धि अनुसारे लोकोंने अपने अपने मतमें किस रीतेसें कल्पना करीहै, और जैनी इस जगतकी व्यवस्था किस हेतुसें किस रीतीसें मानते है ?

उ.—मतधारीयोने जो जैनमतके पंच परमेष्टीकी जगे जुगी कल्पना खमी करी है, सो नीचले यंत्रसें देख लेना.

जैनमत १	अरिहंत १	सिद्ध २.	आचार्य २	उपाध्याय ४.	साधु ५.
सांख्य मत २	कपिल	०	आसुरी	विद्यापाठक.	सांख्य साधु
वैदीक मत ३.	जैमनि	०	भद्रप्रभाकर	विद्यापाठक.	०
नैयायिक मत ४.	गौतम	एकईश्वर	आचार्य नयायिक	न्याय पाठक	साधु
वेदांत मत ५.	व्यास	एकब्रह्म	आचार्योस्ति	वेदांत पाठक	परमहंसादि
वैशेपिक मत ६.	शिव	एकईश्वर	कणाद	पाठक	साधु
यहुदी मत ७.	मूसा	एकईश्वर	अनेक	पाठक	उपदेशक
इसाइ मत ८.	ईशा	एकईश्वर	पथर समस्यादि	पाठक	पादरी

मुसल्मान मत ९.	महम्मद	एक ईश्वर	अनेक	पाठक	फकीर
शंकर मत १०.	शंकर	एक ब्रह्म	आनंदगिरी आदि	शंकरभाष्यादि पाठक	गिरिपुरि भारती। आदि
रामानुज मत ११.	रामानुज	एकईश्वर रामचंद्र	अनेक	रामानुज मत पाठक	साधु वैश्नव
वल्लभ मत १२.	वल्लभाचार्य	एक ईश्वर कृष्ण	अनेक	वल्लभ मत पाठक	तिस मतके साधु नहि.
कबीरमत १३.	कबीर	एक ईश्वर	अनेक	तन्मत पाठक	गृहस्थ वा साधु
नानक मत १४.	नानक	एक ईश्वर	अनेक	ग्रंथ पाठक	उदासी साधु
दादूमत १५.	दादू	एक ईश्वर	सुंदर दासादि	तत् ग्रंथ पाठक	दादू पंथी साधु
गोरख मत १६.	गोरख	एक ईश्वर	अनेक	तत् ग्रंथ पाठक	कानफटे योगी

स्वामीनारायण १७	सामी नारायण	एकईश्वर	स्त्री और परिग्रह धारी	तत् ग्रंथ पाठक	रंगे वस्त्रवाले धोले वस्त्रां वाले
दयानंदमत १८	दयानंद	एक ईश्वर	अस्ति	तन्मत पाठक	साधु

इत्यादि इस तरे मतधारीयोंने पंच परमेष्टीकी जगे पांच २ वस्तु कल्पना करी है, इस वास्ते पंच परमेष्टीके विना अन्य कोइ सृष्टिका कर्त्ता सर्वज्ञ वीतराग ईश्वर नही है, निःकेवल लोकांको अज्ञान भ्रमसें सृष्टिकेर्त्ताकी कल्पना उत्पन्न होती है, पूर्व पक्ष कोइ प्रश्न करे के जेकर सर्वज्ञ वीतराग ईश्वर जगतका कर्त्ता नहीहै, तो यह जगत अपने आप कैसे उत्पन हुआ, क्योंकि हम देखतेहै कर्त्ताके विना कुछभी उत्पन्न नही होता है, जैसें घमीयालादि वस्तु. तिसका

उत्तर-हे परीक्षको ! तुमको हमारा अभिप्राय यथार्थ मालुम पडता नही है, इस वास्ते तुम कर्त्ता ईश्वर कहतेहो, जो इस जगतमें बनाइ हुइ वस्तुहै, तिसका कर्त्ता तो हमभी मानतेहै, जैसें घट, पट, शराव, उदंचन, घडियाल, मकान, हाट, हवेली, संकल, जंजीरादि परंतु आकाश, काल, स्वभाव, परमाणु, जीव इत्यादि वस्तुयां किसीकी रची हुइ नही है, क्योंकि सव विद्वानोका यह मतहैके जो वस्तु कार्यरूप उत्पन्न होती है तिसका उपादान कारण अवस्य होनां चाहिये. विना उपादानके कदापि कायकी उत्पत्ति नही होती है, जो कोइ विना उपादान कारणके वस्तुकी उत्पत्ति मानता है, सो मूर्ख, प्रमाणका स्वरूप नही जानता है; तिसका कथन कोइ महा मूढ मानेगा, इस वास्ते आकाश १ आत्मा २

काल ३ परमाणु ४ इनका उपादान कारण कोइ नही है, इस वास्ते यें चारो वस्तु अनादि है. इनका कोइ रचनेवाला नही है, इस्सें जो यह कहता है कि सर्व वस्तुयों ईश्वरने रचीहै सो मिथ्याहै, अब शेष वस्तु पृथ्वी १ पानी २ अग्नी ३ पवन ४ वनस्पति ५ चलने फिरने वाले जीव रहे है, तथा पृथ्वीका भेद नरक, स्वर्ग, सूर्य, चंद्र, ग्रह, नक्षत्र, तारादि है, ये सर्व जड चैतन्यके उपादानसें वने है, जे जीव और जड परमाणुओंके संयोगसें वस्तु वनीहै, वे ऊपर पृथ्वी आदि लिख आयेहै, ये पृथ्वी आदि वस्तु प्रवाहसें अनादि नित्यहै, और पर्याय रूप करके अनित्यहै, और यें जड चैतन्य अनंत स्वाभाविक शक्तिवाले है, ये अनंत शक्तियां अपने २ कालादि निमित्तोंके मिलनेसें प्रगट होतीहै, और इस ज-

गतमें जो रचना पिछे हूइहै, और जो हो रहीहै, और जो होवेगी, सर्व पांच निमित्त उपादान का रणोंसें होतीहै, वे कारण येहहै, काल १ स्वभाव २ नियति ३ कर्म ४ उद्यम ५; इन पांचोके सिवाय अन्य कोइ इस जगतका कर्त्ता और नियंता ईश्वर किसी प्रमाणसें सिद्ध नही होताहै, तिसकी सिद्धीका खंडन पूर्वे पहिले सब लिख आइहै, जैसे एक बीजमें अनंत शक्तियांहै, वृक्षमें जितने रंग विरंगे मूल १ कंद २ स्कंध ३ त्वचा ४ शाखा ५ प्रवाल ६ पत्र ७ पुष्प ८ फल ९ बीज १० प्रमुख विचित्र रचना मालुम होतीहै, सो सर्व बीजमें शक्ति रूपसें रहतीहै, जब कोइ बीजको जालके भस्म करे तब तिस बिजके परमाणुयोमें पूर्वोक्त सर्व शक्तियां रहतीहै, परंतु बिना निमित्तके एकभी शक्ति प्रगट नही होतीहै,

जेकर बीजमें शक्तियां न मानीये, तवतो गेहूंके बीजसें आंव और बंबुल मनुष्य, पशु, पक्षी आदिकी उत्पन्न होने चाहिये. इस वास्ते सर्व वस्तुयोंमें अपनी २ अनंत शक्तियांहै. जैसा २ निमित्त मिलताहै तैसी २ शक्ति वस्तुमें प्रगट होतीहै, जैसें बीज कोठिमें पराहै तिसमें वृक्षके सर्व अवयवोंके होनेकी शक्तियांहै, परंतु बीजके काल विना अंकुर नही हो शक्ताहै; कालतो वृष्टी रुतुकाहै, परंतु भूमि और जलके संयोग विना अंकुर नही हो शक्ताहै, काल भूमि जलतो मिलेहै परंतु विना स्वभावके कंकर बोवेतो अंकुर नही होवेहै. बीजका स्वभाव १ काल २ भूमि ३ जलादितो मिलेहै, परंतु बीजमें जो तथा तथा भवन अर्थात् होनेवाली अनादि नियतिके विना बीजतेला लंबा चोरा अंकुर निर्विघ्नसें नही हे

शक्ताहै, जो निर्विघ्नपणे तथा तथा रूप कार्यको निष्पन्न करे सो नियति, और जेकर वनस्पतिके जीवोंने पूर्व जन्ममें ऐसे कर्म न करे होतेतो वनस्पतिमे उत्पन्न न होते; जेकर बोवनेवाला न होवे तथा बीज स्वयं अपने भारीपणे करके पृथ्वीमें न पडतो कदापि अंकुर उत्पन्न न होवे; इस वास्ते बीजांकुरकी उत्पत्तिमें पांच कारणहै. काल १ स्वभाव २ नियति ३ पुर्वकर्म ४ उद्यम ५ इन पांचोके सिवाय अन्य कोइ अंकुर उत्पन्न करनेवाला कोइ ईश्वर नही सिद्ध होताहै, तथा मनुष्य गर्भमें उत्पन्न होताहै तहांभी पांच कारणसेंही होताहै, गर्भ धारणेके कालमेंही गर्भ रहै १, गर्भकी जगाका स्वभाव गर्भ धारणका होवे तोही गर्भ धारण करे २, गर्भका तथा तथा निर्विघ्नपनेसें होना नियतिसेंहै ३, जीवोंने पूर्व जन्ममें

मनुष्य होनेके कर्म करेहै तोही मनुष्यपणे उत्पन्न होतेहै ४, माता पिता और कर्मसें आकर्पण न होवेतो कदापि गर्भ उत्पन्न न होवे, ५ इसीतरे जो वस्तु जगतमें उत्पन्न होतीहै सो इनही पांचो निमित्त कारणोंसें और उपादान कारणोंसें होती है, और पृथ्वी प्रवाहसें सदा रहेगी. और पर्याय रूप करके तो सदा नाश और उत्पन्न होती रही है; क्योंकि सदा असंख्य जीव पृथ्वीपणेही उत्पन्न होतेहै, और मरतेहै तिन जीवाके शरीरोंका पिंडही पृथ्वीहै. जो कोइ प्रमाणवेत्ता ऐसे समझताहै के कार्य रूप होनेसें पृथ्वी एक दिनतो अवश्य सर्वथा नाश होवेगी, घटवत्. उत्तर—जैसा कार्य घटहै तैसा कार्य पृथ्वी नहीहै, क्योंकि घटमें घटपणे उत्पन्न होनेवाले नवीन परमाणु नही आतेहै, और पृथ्वीमें तो सदा पृथ्वी शरीरवाले

जीव असंख उत्पन्न होतेहै, और पुर्वले नाश हो-तेहै. तिन असंख जीवांके शरीर मिलने और विछरनेसे पृथ्वी तैसीही रहेगी. जैसें नदीका पाणी अगला २ चला जाता है; और नवीन नवीन आनेसें नदी वैसीही रहती है, इस वास्ते घटरूपकार्य समान पृथ्वी नही है, इस वास्ते पृथ्वी सदाही रहेगी और तिसके उपर जो रचना है; सो पुर्वोक्त पांच कारणोंसें सदा होती रहेगी. इस वास्ते पृथ्वी अनादि अनंत काल तक रहगी, इस वास्ते पृथ्वीका कर्त्ता ईश्वर नही है, और जो कितनेक भोलें जीव मनुष्य १ पशु २ पृथ्वी ३, पवन ४, वनस्पतिकों तथा चंद्र, सूर्यकों देखके और मनु-ष्य पशुयोके शरीरकी हड्डीयांकी रचना आंखके पड़दे खोपरीके टुकड़े नशा जालादि शरीरोंकी विचित्र रचना देखकें हेरान होतेहै, जब कुछ

आगा पीछा नही सूझताहै, तब हार कर यह कह देतेहै, यह रचना ईश्वरके विना कौन कर सक्ता है; इस वास्ते ईश्वर कर्त्ता २ पुकारते है; परंतु जगत कर्त्ता माननेसें ईश्वरका सत्यानाश कर देते है, सो नही देखतेहै. काणी हथनी एक पासेकी ही वेलमीयां खातिहै, परंतु हे भोले जीव जेकर तेने अष्ट कर्मके १४८ एकसौ अम्रतालीस भेद जाने होते, तो अपने विचारे ईश्वरकों काहेको जगत कर्त्ता रूप कलंक देके, तिसके ईश्वरत्वकी हानी करता. क्योंकि जो जो कल्पना भोले लोकोमें ईश्वरमें करी है सो सो सर्व कर्मद्वारा सिद्ध होती है, तिन कर्मोका स्वरूप संक्षेप मात्र यहां लिखते है, जेकर विषेश करके कर्म स्वरूप जाननेकी इछा होवे तदा षट्कर्म ग्रंथ १ कर्म प्रकृति प्राव्रत २ पंचसंग्रह ३ शतक ४ प्रमुख ग्रंथ

ज्ञानावरणीय १ दर्शनावरणीय २ वेदनीय ३ मोहनीय ४ आयु ५ नाम ६ गोत्र ७ अंतराय ८ इनमेसें प्रथम ज्ञानावरणीयके पांच भेदहै; मति ज्ञानावरणीय १ श्रुतज्ञानावरणीय २ अवधिज्ञानावरणीय ३ मनःपर्यायज्ञानावरणीय ४ केवलज्ञानावरणीय ५. तहां पांच इंद्रिय और छठा मन इन छहो द्वारा जो ज्ञान उत्पन्न होवे तिसका नाम मतिज्ञान है. तिस मतिज्ञानके तीनसौ छत्तीस ३३६ भेदहै. वे सर्व कर्मग्रंथकी वृत्तिसें जानने. तिन सर्व ३३६ भेदांका आवरण करनेवाला मतिज्ञानावरण कर्मका भेदहै, जिस जीवके आवरण पतला हुआहै तिस जीवकी बहुत बुद्धि निर्मलहै; जैसें जैसें आवरणके पतलेपणेकी तारतम्यताहै तैसें तैसें जीवांमे बुद्धिकी तारतम्यताहै. यद्यपि मतिज्ञान मतिज्ञानावरणके क्षयोप

शमसें होताहै तोभी तिस क्षयोपशमके निमित्त मस्तक, शिर, विशाल मस्तकमें भेजा, चरबी, चीकास, मांस, रुधिर, निरोग्य हृदय, दिल निरुपद्रव, और संठ, ब्राह्मी वच, घृत, दूध, साकर, प्रमुख अच्छी वस्तुका खानपानादिसें अधिक अधिकतर मतिज्ञानावरणके क्षायोपशमके निमित्त है; और शील संतोष महा व्रतादि करणी, और पठन करानेवाला विद्यावान् गुरू, और देश काल श्रद्धा, उत्साह परिश्रमादि ये सर्व मतिज्ञानावरणके क्षयोपशम होनेके कारणहै. जैसें जैसें जीवांकों कारण मिलतेहै तैसी तैसी जीवांकी बुद्धि होतीहै इत्यादि विचित्र प्रकारसें मतिज्ञानावरणीका भेदहै. इति मतिज्ञानावरणी १. दूसरा श्रुतज्ञानावरण श्रुतज्ञानका आवरण श्रुतज्ञान, तिसकों कहतेहै, जो गुरू पासे सुनके ज्ञान होवे

और जिसके बलसें अन्य जीवांकों कथन करा जावे, तिसके निमित्त पूर्वोक्त मतिज्ञानवाले जानने, क्योंके ये दोनो ज्ञान एक साथही उत्पन्न होतेहै, परंतु इतना विशेश है; मतिज्ञान वर्त्तमान विषयिक होता है. और श्रुतज्ञान त्रिकाल विषय होताहै; श्रुतज्ञानके चौदह १४ तथा वीस भेद २० है, तिनका स्वरुप कर्मग्रंथसें जानना. पठन पाठनादि जो अक्षरमय वस्तुका ज्ञान है, सो सर्व श्रुतज्ञान है; तिसका आवरण आछादन जो है, जिसकी तारतम्यतासें श्रुतज्ञान जीवांकों विचित्र प्रकारका होताहै, तिसका नाम श्रुतज्ञानावरणीय है. इसकै क्षायोपशमके वेही निमित्तहै, जौनसें मतिज्ञानके है; इति श्रुतज्ञानावरण २. तीसरा अवधिज्ञानका आवरण अवधिज्ञानावरणीय ३. ऐसेंही मनःपर्यायज्ञानावरण ४. केवलज्ञानावरण

५, इन पांचो ज्ञानोमेंसें पिछले तीन ज्ञान इस कालके जीवांकों नहीहै; सामग्री और साधनके अन्नावसें. इस वास्ते इनका स्वरूप नंदी आदी सिद्धांतोसें जानना. ये पांच नेद ज्ञानावरण कर्म केहै. यह ज्ञानावरणकर्म जिस कर्त्तव्योंसें बांधता है, अर्थात् नत्पन्न करके अपने पांचो ज्ञान शक्तियांका आवरण कर्त्ता है सो येहहै, मति, श्रुत प्रमुख पांच ज्ञानकी १ तथा ज्ञानवंतकी २ तथा ज्ञानोपकरण पुस्तकादिकी ३ प्रत्यनीकता अर्थात् अनिष्टपणा, प्रतिकूलपणा करे, जैसें ज्ञान और ज्ञानवंतका बुरा होवे तैसें करे; १ जिस पासों पढा होवे तिस गुरुका नाम न बतावे, तथा जानी हूइ वस्तुकों अजानी कहे २; ज्ञानवंत तथा ज्ञानोपकरणका अग्निशस्त्रादिकसें नाश करे ३; तथा ज्ञानवंत ऊपर तथा ज्ञानोपकरण ऊपर प्रद्वेष अं-

तरंग अरुची मत्सर ईर्ष्या करे ४; पढनेवालोंकों अन्न वस्त्र वस्ती देनेका निषेध करें, पढनेवालोंको अन्य काममें लगावे, बातोंमें लगावे, पठन विछेद करे ५; ज्ञानवंतकी अति अवज्ञा करे, यह हीन जाति वाला है, इत्यादि मर्म प्रगट करनेके वचन बोले, कलंक देवे, प्राणांत कष्ठ देवे, तथा आचार्य उपाध्यायकी अविनय मत्सर करे, अकालमें स्वाध्याय करे, योगोपधान रहित शास्त्र पढें, अस्वाध्यायमें स्वाध्याय करें, ज्ञानके उपकरण पास हूयां दिसा मात्रा करे, ज्ञानोपकरणको पग लगावें, ज्ञानोपकरण सहित मैथुन करे, ज्ञानोपकरणकों थूंक लगावे. ज्ञानके द्रव्यका नाश करे, नाश करनेको मना न करे इन कामोंसें ज्ञानावरणीय पंच प्रकारका कम बांधे; तिसके उदय क्षयोपशमसें नाना प्रकारकी बुद्धिवाले जीव होते महाव्रत सं-

यम तपसें ज्ञानावरणीय कर्म क्षय करे, तव केवलज्ञानी सर्व वस्तुका जानने वाला होवे, इति प्रथम ज्ञानावरणीय कर्मका संक्षेप मात्र स्वरूप. १

अथ दूसरा दर्शनावरणीय कर्म तिसके नव ए भेदहै. चक्षुदर्शनावरण १ अचक्षुदर्शनावरण २ अवधिदर्शनावरण ३ केवलदर्शनावरण ४ निद्रा ५ निद्रानिद्रा ६ प्रचला ७ प्रचला प्रचला ८ स्त्यानर्द्धी ए. अव इनका स्वरूप लिखतेहै. सामान्य रूप करके अर्थात् विशेष रहित वस्तुके जाननेकी जो आत्माकी शक्तिहै तिसकों दर्शन कहते है, तिनमें नेत्रांकी शक्तिकों आवरण करे सो चक्षुदर्शनावरणीय कर्मका भेदहै; इसके क्षयोपशमकी विचित्रतासें आंखवाले जीवोंकी आंखद्वारा विचित्र तरेंकी दृष्टि प्रवर्त्ते है, इसके क्षयोपशम होनेमें विचित्र प्रकारके निमित्त है, इति चक्षुदर्शनावरणी-

य १. नेत्र वर्जके शेष चारों इंद्रियोंकों अचक्षु द र्शन कहते है, तिनके सुनने, सूंघने, रस लेने, स्पर्श पिछाननेका जो सामान्य ज्ञानहै सो अचक्षु दर्शनहै; चारो इंद्रियोंकी शक्तिका आछादन करने-वाला जो कर्म है तिसको अचक्षु दर्शन कहते है, इसके क्षयोपशम होनेमें अंतरंग बहिरंग विचित्र प्रकारके निमित्तहै. तिन निमित्तोंद्वारा इस कर्म-का क्षय उपशम जैसा जैसा जीवांके होता है तैसी तैसी जीवोंकी चार इंद्रियकी स्व स्व विष-यमें शक्ति प्रगट होती है, इति अचक्षुदर्शनावर-णी २. अवधि दर्शनावरणीय और केवलदर्शना वरणीयका स्वरूप शास्त्रसें देख लेनां; क्योंकि सामग्रीके अन्नावसें ये दोनो दर्शन इस कालक्षे-त्रके जीवांकों नही है, एवं दर्शनावरणीयके चार न्नेद हुए ४. पांचमा न्नेद निद्रा जिसके उदयसें

सुखें जागे सो निद्रा १ जो वहुत हलाने चला-
नेसें जागे सो निद्रा निद्रा २ जो वैठेकों नींद आवे
सो प्रचला ३ जो चलतेकों आवे सो प्रचला प्र-
चला ४ जो नींदमें उठके अनेक काम करे नींद-
में शरीरमें वल वहुत होवे है, तिसका नाम स्त्या-
नर्द्धी निद्राहै ५. पांच इंद्रियांके ज्ञानमे हानि क-
रती है, इस वास्ते दर्शनावरणीयकी प्रकृति है,
एवं ए भेद दर्शनावरणीय कर्मके हुए, इस क-
र्मके वांधनेके हेतु ज्ञानावरणीयकी तरे जानने,
परं ज्ञानकी जगे दर्शन पद कहनां, दर्शन चक्षु
अचक्षु आदि, दर्शनी साधु आदि जीव, तिनकी
पांच इंद्रियाका वुरा चिंते, नाश करे अथवा स-
म्मति तत्वार्थ द्वादशार नयचक्रवाल तर्कादि दर्श-
न प्रभावक शास्त्रके पुस्तक तिनका प्रत्यनीकप-
णादि करेतो दर्शनावरणीय कर्मका वंध करे,

इति दुसरा कर्म २.

अथ तीसरा वेदनीय कर्म तिसकी दो प्रकृतिहै; साता वेदनीय १ असाता वेदनीय २ साता वेदनीयसें शरीरकों अपने निमित्तद्वारा सुख होताहै; और असाता वेदनीयके उदयसें दुःख प्राप्त होता है. एवं दो भेदोंके बांधनेके कारण प्रथम साता वेदनीयके बंध करणेके कारण गुरु अर्थात् अपने माता पिता धर्माचार्य इनकी भक्ति सेवा करे १ क्षमा अपने सामर्थ्यके हुए दुसरायोंका अपराध सहन करना २ परजीवांकों दुखी देखके तिनके दुःख मेटनेकी वांछा करे ३ पंचमहाव्रत अनुव्रत निर्दूषण पाले ४ दश विध चक्रवाल समाचारी संयम योग पालनेसें ५ क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, रति अरति, शोक, भय, जुगुप्सा इनके उदय आया इनको निष्फल करे ६ सूपात्र

दान, अन्नय दान, देता सर्व जीवां उपर उपकार करे; सर्व जीवांका हित चिंतन करे ७ धर्ममें स्थिर रहे, मरणांत कष्टकेन्नी आये, धर्मसें चलायमान न होवे, बाल वृद्द रोगकी वैयावृत्त करतां धर्ममें प्रवर्त्ततां सहाय करे, चैत्य जिन प्रतिमाकी अठी न्नक्ति करतां सराग संयम पाले; देशव्रतीपणा पाले, अकाम निर्जरा अज्ञान तप करें, सौच्य सत्यादि सुंदर अंतःकरणकी वृत्ति प्रवर्त्तावे तो साता वेदनीय कर्म वांधे, इति साता वेदनीयके बंध हेतु कहे १ इनसें विपर्यय प्रवर्त्ते तो असाता वेदनीय वांधे २ इति वेदनीय कर्म स्वरुप ३.

अथ चोथा मोहनीय कर्म तिसके अठावीस न्नेद है, अनंतानुबंधी क्रोध १ मान २ माया ३ लोन्न ४, अप्रत्याख्यान क्रोध ५ मान ६ माया ७ लोन्न ८, प्रत्याख्यानावरण क्रोध ए मान १० माया

११ लोभ १२, संज्वलका क्रोध १३ मान १४ माया १५ लोभ; १६ हास्य १७ रति १८ अरति १९ शोक २० भय २१ जुगुप्सा २२ स्त्रीवेद २३ पुरुषवेद २४ नपुंसकवेद २५ सम्यक्त मोहनीय २६ मिश्र मोहनीय २७ मिथ्यात्व मोहनीय २८ अथ इनका स्वरूप लिखतेहै; प्रथम अनंतानुबंधी क्रोध मान माया लोभ जां तक जीवे तां तक रहे; हटे नही तिनमेंसें अनंतानुबंधी क्रोध तो ऐसाकि जाव जीव सुधी क्रोध न छोडे, अपराधी कितनी आधीनगी करे तोभी क्रोध न छोडे, यह क्रोध ऐसाहै जैसे पर्वतका फटना फेर कदापि न मिले, मान पथ्थरके स्तंभ समान किंचित मात्रभी न नमे, माया कठिन वांसकी जड समान सूधी न होवे, लोभ कसिके रंग समान फेर उतरे नही; ये चारों जिसके उदयमें होवे सो जीव मरके न-

रकमें जाता है; और इस कषायके उदयमें जीवांकों सच्चे देवगुरू धर्मकी श्रद्धारूप सम्यक्त नही होता है; ४ दूसरा अप्रत्याख्यान कषाय तिसकी स्थिति एक वर्षकी हैं. एक वर्ष तक क्रोध मान माया लोभ रहे तिनमें क्रोधका स्वरूप पृथ्वीके रेखा फाटने समान वडे यतनसें मिले, मान हाडकेस्तंभ समान मुश्केलसें नमे, माया मिंढेके सींगके वल समान सिधा कठनतासें होवे; लोभ नगरकी मोरीके कीचडके दाग समान, इस कषायके उदयसें देश वृतीपणा न आवे और मरके पशु तीर्यंचकी गतिमें जावे ८ तीसरी प्रत्याख्यानावरण कषाय तिसकी स्तिथि चार मासकी है. क्रोध वालुकी रेखा समान, मान काष्टके स्तंभ समान, माया वैलके मूत्र समान वांकी, लोभ गाडीके खंजन समान, इसके उदयसें शुद्धसाधु

नही होता है ऐसा कषायवाला मरके मनुष्य होताहै १४ चौथी संज्वलनकी कषाय, तिसकी स्थिति एक पक्षकी. क्रोध पाणीकी लकीर समान, मान वांसकी शींखके स्तंभे समान, माया, वांसकी छिल्लक समान, लोभ हलदीके रंग समान, इसके उदयसें वीतराग अवस्था नही होती है. इस कषाइवाला जीव मरके स्वर्गमें जाताहै १६ जिसके उदयसें हासी आवे सो हास्य प्रकृति १७ जिसके उदयसें चित्तमें निमित्त निर्निमित्तसें रति अंतरमें खुशी होवे सो रति १८ जिसके उदयसें चित्तमें सनिमित्त निर्निमित्तसें दिलगीरी उदासी उत्पन्न होवें सो अरति प्रकृति १९ जिसके उदयसें इष्ट विजोगादिसें चित्तमें उद्वेग उत्पन्न होवे सो शोक मोहनीय प्रकृति २० जिसके उदयसें सात प्रकारका भय उत्पन्न होवे सो भय

मोहनीय २१ जिसके उदयसें मलीन वस्तु देखी सूग उपजे सो; जुगुप्सा मोहनीय २२ जिसके उदयसें स्त्रीके साथ विषय सेवन करनेकी इच्छा उत्पन्न होवे, सो पुरुषवेद मोहनीय २३ जिसके उदयसें पुरुषके साथ विषय सेवनेकी इच्छा उत्पन्न होवे, सो स्त्री वेद मोहनीय २४ जिसके उदयसें स्त्रीपुरुष दोनोंके साथ विषय सेवनेकी अभिलाषा उत्पन्न होवे, सो नपुंसकवेद मोहनीय. २५ जिसके उदयसें शुद्ध देव गुरु, धर्मकी श्रद्धा न होवे सो मिथ्यात्व मोहनीय २६ जिसके उदयसें शुद्ध देव गुरु धर्म अर्थात् जैनमतके ऊपर रागभी न होवे और द्वेषभी न होवे, अन्य मतकीभी श्रद्धा न होवे सो मिश्र मोहनीय २७ जिसके उदयसें शुद्ध देव गुरु धर्मकी श्रद्धातो होवे परंतु सम्यक्तमें अतिचार लगावे सो सम्यक्त मोहनीय

२८ इन २८. प्रकृतियोमें आदिकी २५ पच्चीस प्रकृतिकों चारित्र मोहनीय कहते है, और ऊपली तीन प्रकृतियोंकों दर्शनमोहनीय कहते है एवं २८ प्रकृतिरुप मोहनीय कर्म चौथा है, अथ मोहनीय कर्मके बंध होनेके हेतु लिखते है. प्रथम मिथ्यात्व मोहनीयके बंध हेतु उन्मार्ग अर्थात् जे संसारके हेतु हिंसादिक आश्रव पापकर्म तिनकों मोक्ष हेतु कहे तथा एकांत नयसें निः केवल क्रिया कष्टानुष्ठानसें मोक्ष प्ररूपे तथा एकांत नयसें निःकेवल ज्ञान मात्रसें मोक्ष कहे ऐसेही एकले विनयादिकसें मोक्ष कहे १ मार्ग अर्थात् अर्हत भाषित सम्यग् दर्शन ज्ञान चारित्ररूप मोक्ष मार्ग तिसमे प्रवर्त्तनेवाले जीवकों कुहेतु, कुयुक्ति, करके पूर्वोक्त मार्गमें भ्रष्ट करे २ देवद्रव्य ज्ञान द्रव्यादिक तिनमें जो भगवानके मंदिर प्रतिमादि

के काम आवे काष्ट, पाषाण, मृत्तीकादिक तथा तिस देहरादिके निमित्त करा हुआ रूपा, सोनादि धन तिसका हरण करे; देहराकी भूमि प्रमुखकों अपनी कर लेवे, देवकी वस्तुसें व्यापार करके अपनी आजीवीका करे तथा देवद्रव्यका नाश करे, शक्तिके हुए देवद्रव्यके नाश करनेवालेको हटावे नही, ये पुर्वोक्त काम करनेवाला मिथ्यादृष्टि होताहै, सो मिथ्यात्व मोहनीय कर्मका बंध करता है; तथा दूसरा हेतु तीर्थंकर केवलीके अवर्णवाद बोले, निंदा करे, तथा भले साधुकी तथा जिन प्रतिमाकी निंदा करे, तथा चतुर्विध संघ साधु साधवी श्रावक श्राविकाका समुदाय तिसकी श्रुतज्ञानकी निंदा अवज्ञाहीलना करताहुआ, और जिन शासनका उड्डाह करता हुआ अयश करता कराता हुआ निकाचित महा मिथ्यात्व

मोहनीय कर्म बांधे. इति दर्शन मोहनीयके बंध हेतु. ॥ अथ चारित्रमोहनीय कर्मके बंध हेतु लिखते है. चारित्र मोहनीय कर्म दो प्रकारका है, कषाय चारित्र मोहनीय १. नोकषाय चारित्र मोहनीय २. तिनमेंसें कषाय चारित्र मोहनीयके १६ सोलां भेदहै, तिनके बंध हेतु लिखते है. अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभमे प्रवर्त्तें तो सोलाही प्रकारका कषाय मोहनीय कर्म बांधे. अप्रत्याख्यानमे वर्त्ते तो ऊपल्या बारां कषाय बांधे. प्रत्याख्यानमें प्रवर्त्ते तो ऊपल्या आठ कषाय बांधे, संज्वलनमें प्रवर्त्ते तो चार संज्वलनका कषाय बांधे. इति कषाय चारित्र मोहनीयके बंध हेतु. नोकषाय हास्यादि तिनके बंधहेतु यह है, प्रथम हास्य हांसी करे, भांड कुचेष्टा करे, बहुत बोले तो हास्य मोहनीय कर्म बांधे १ देश देखनेके र-

रससें, विचित्र क्रीमाके रससें, अति वाचाल होनेसें, कामण मोहन टूणा वगेरे करे; कुतुहल करे तो रति मोहनीय कर्म बांधे २ राज्य न्नेद करे, नवीन राजा स्थापन करे परस्पर लमाइ करावे, दूसरायोंकों अरित उच्चाट उत्पन करे, अशुन्न काम करने करानेमें उत्साह करे, और शुन्न कामके उत्साहकों न्नांजे, निष्कारण आर्त्तध्यान करे तो अरति मोहनीय कर्म बांधे ३. परजीवांकों त्रास देवे तो, निर्दय परिणामी न्नय मोहनीय कर्म बांधे ४. परको शोक चिंता संताप उपजावे तपावे तो शोक मोहनीय कर्म बांधे ५ धर्मी साधु जनोकी निंदा करे साधुका मलमलीनगात्र देखी निंदा करे तो जुगुप्सा मोहनीय कर्म बांधे ६, शब्द, रुप, रस, गंध, स्पर्सरूप मनगती विषयमें अत्यंताशक्त होवे इसरेकी इर्षा करे, माया

मृषा सेवे, कुटिल परिणामी होवे, पर स्त्रीसें ज्ञोग करै तो जीव स्त्रीवेद मोहनीय कर्म बांधे ७ सरल होवे, अपनी स्त्रीस उपरांत संतोषी होवे, इर्षा रहित मंद कषायवाला जीव पुरुषवेद बांधे ० तीव्र कषायवाला, दर्शन दुसरे मतवालोंका शील ज्ञंग करे, तीव्र विषयी होवे, पशुको घात करे, मिथ्यादृष्टी जीव नपुंसकवेद बांधे ए. संयमीके दुषण दिखावे, असाधुके गुण बोले, कषायकी उदीरणा करता हुआ जीव चारित्र मोहनीय कर्म समुच्चय बांधे, इति मोहनीय कर्म बंध हेतु. यह मोहनीय कर्म मदीराके नशेकी तरें अपने स्वरूपसें ज्रष्ठ कर देताहै. इति मोहनीय कर्मका स्वरुप संक्षेप मात्र पुरा हुआ ४

अथ पांचमा आयुकर्म, तिसकी चारप्रकृति जिनके उदयसें नरक १ तिर्यंच २ मनुष्य ३

देव ४ भवसें खैंचा हुआ जीव जावे है, जैसें चमकपाषाण लोहकों आकर्षण करता है, तिसका नाम आयुकर्म. नरकायु १ तिर्यंचायु २ मनुष्यायु ३ देवायु ४ प्रथम नरकायुके बंध हेतु कहतेहै. महारंभ चक्रवर्ती प्रमुखकी ऋद्धि भोगनेमें महा मूर्छा परिग्रह सहित, व्रत रहित अनंतानुबंधी कषायोदयवान् पंचेंद्रिय जीवकी हिंसा निशंक होकर करे, मदिरा पीवे, मांस खावे, चौरी करे, जूंया खेले, परस्त्री और वेस्या गमन करे; शिकार मारे, कृतघ्नी होवे, विश्वासघाती, मित्र द्रोही, उत्सूत्र प्ररूपे, मिथ्यामतकी महिमा वढावे, कृष्ण नील, कापोत लेश्यासें अशुभ परिणामवाला जीव नरकायु बांधे १ तिर्यंचकी आयुके बंध हेतु यह है. गूढ हृदयवाला, अर्थात् जिसके कपटकी किसीको खबर न पडे, धूर्त होवे, मुखसें मीठा बोले,

हृदयमें कतरणी रखे, जूठे दूषण प्रकाशे, आर्त्त-ध्यानी इस लोकके अर्थें तप क्रिया करे, अपनी पूजा महिमाके नष्ट होनेके भयसें कुकर्म करके गुरुआदिकके आगे प्रकाशे नही, जूठ बोले, कमती देवे, अधिक लेवे, गुणवानकी इर्षा करै, आर्त्तध्यानी कृष्णादि तीन मध्यमं लेश्यावाला जीव तिर्यंच गतिका आयु बांधे. इति तिर्यंचायु ४

अथ मनुष्यायुके बंधहेतु मिथ्यात्व कषायका स्वभावेही मंदोदयवाला प्रकृतिका भद्रिक धूल रेखा समान कषायोदयवाला सुपात्र कुपात्रकी परीक्षा विना विशेष यश कीर्त्तिकी वांछा रहित दान देवे, स्वभावे दान देनेकी तीव्र रुचि होवे, क्षमा, आर्जव, मार्दव, दया, सत्य शौचादिक मध्यम गुणामें वर्त्तें, सुसंबोध्य होवे, देव गुरुका पूजक, पूजाप्रिय कापोत लेश्याके परिणामवाला मनुष्य ति-

यैंचादि मनुष्यायु वांधे ३. अथ देव आयु अविरति सम्यगदृष्टि मनुष्य तिर्यंच देवताका आयु वांधे सुमित्रके संयोगसें धर्मकी रुचिवाला देशविरति सरागसंयमी देवायु बांधे, बालतप अर्थात् दुःखगर्भित, मोहगर्भित वैराग्य करके दुष्कर कष्ट पंचाग्नि साधन रस परित्यागसें, अनेक प्रकारका अज्ञान तप करनेसें निदान सहित अत्यंत रोष तथा अहंकारसें तप करे, असुरादि देवताका आयु वांधे तथा अकाम निर्जरा अजाणपणे भूख, तृषा, शीत, उष्ण रोगादि कष्ट सहनेसें स्त्री अन मिलते शील पाले, विषयकी प्राप्तिके अभावसें विषय न सेवनसें इत्यादि अकाम निर्जरासें तथा बाल मरण अर्थात् जलमें डूब मरे, अग्निसें जल मरे, झंपापातसें मरे, शुभ परिणाम किंचित्वाला तो व्यंतर देवताका आयु वांधे, आचार्यादिककी अ-

वज्ञा करे तो, किल्विषदेवताका आयु बांधे, तथा मिथ्यादृष्टीके गुणांकी प्रशंसा करे, महिमा वढावे. अज्ञान तप करे, और अत्यंत क्रोध होवे तो, परमाधार्मिकका आयु बांधे, इति देवायुके बंधहेतु. यह आयु कर्म हडिके बंधन समान है. इसके उदयसें चारों गतिके जीव जीवते है. और जब आयु पूर्ण होजाता है तब कोइभी तिसकों नही जीवा सक्ता है, जेकर आयुकर्म विना जीव जीवे तो मतधारीयोके अवतार पैगंबर क्यों मरते? जितनी आयु पूर्व जन्ममें जीव बांधके आया है तिससें एक क्षण मात्रभी कोइ अधिक नही जीव सक्ता है, और न किसीको जीवा सक्ता है मतधारी जो कहते है हमारे अवतारादिकनें अमुक अमुकको फिर जीवता करा, यह बात महा मिथ्या है क्योंकि जेकर उनमें ऐसी शक्ती होतीतो

आप क्यों मर गये ? सदा क्यों न जीते रहे ? ईशा महम्मदादि जेकर आज तक जीते रहेतेतो हम जानते ये सच्चे परमेश्वरकी तर्फसें उपदेश करने आये है. हम सब उनके मतमें हो जाते. मत धारीयोकों मेहनत न करनी पम्रती, जबसाधारण मनुष्योके समान मर गये तब क्योंकर शक्तिमान हो सक्तेहै ? ये सर्व जूठी वातोंकी अणघम्र गप्पे जंगली गुरुयोने जंगलीपणेसें मारीहै, इस वास्ते सर्व मिथ्याहै. इति आयु कर्म पंचमा.

अथ छठा नाम कर्म, तिसका स्वरूप लिखतेहै. तिसके ९३ तिरानवे नेदहै. नरकगति नाम कर्म १ तिर्यंच गति नाम २ मनुष्य गति नाम ३ देवगति नाम ४ एकेंड्रिय जाति १ द्वींड्रिय जाति२ तीनेंड्रिय जाति ३ चार इंड्रिय जाति ४ पंचेंड्रिय जाति ५ एवं ए उदारिक शरीर १० वैक्रिय शा-

रीर ११ आहारिक शरीर १२ तैजस शरीर १३ कार्मण शरीर १४ ऊदारिकांगोपांग १५ वैक्रियांगोपांग १६ आहारिकांगोपांग १७ ऊदारिकबंधन १८ वैक्रिय बंधन १९ आहारिक बंधन २० तैजस बंधन ११ कार्मण बंधन २१ ऊदारिक संघातन २३ वैक्रिय संघातन २४ आहारिक संघातन २५ तैजस संघातन २६ कार्मण संघातन २७ वज्र ऋषभ नराच संहनन २८ ऋषभ नराच संहनन २९ नराच संहनन ३० अर्द्ध नराच संहनन ३१ कीलिका संहनन ३२ छेवर्त्त संहनन ३३ सम चतुरस्त्र संस्थान ३४ निग्रोध परिमंडल संस्थान ३५ सादिया संस्थान ३६ कुब्ज संस्थान ३७ वामन संस्थान ३८ हुंडक संस्थान ३९ कृष्ण वर्ण ४० नील वर्ण ४१ रक्त वर्ण ४२ पीत वर्ण ४३ शुक्ल वर्ण ४४ सुगंध ४५ डुर्गंध ४६ तिक्त रस ४७ क-

टुक रस ४७ कषायरस४ए आम्ल रस ५० मधुर रस ५१ कर्कश स्पर्श ५२ मृडु स्यर्श ५३ हलका ५४ नारी ५५ शीत स्पर्श ५६ उश्न स्पर्श ५७ स्निग्ध स्पर्श ५७ रुक्षस्पर्श ५ए नरकानुपूर्वी ६० तिर्यंचानुपूर्वी ६१ मनुष्यानुपूर्वी ६२ देवानुपूर्वी शुन्नविहायगति ६४ अशुन्नविहायगति६५ पराघात नाम ६६ उत्स्वास ६७ आतप ६७ उद्योत नाम ६एअगुरू लघु ७० तीर्थंकर नाम ७१ निर्माण७२ उपघात नाम ७३ त्रसनाम ७४ वादर नाम ७५ पर्याप्त नाम ७६ प्रत्येक नाम ७७ स्थिर नाम ७७ शुन्न नाम ७ए सुन्नग नाम ७० सुस्वर नाम ७१ आदेय नाम ७२ यशकीर्ति नाम ७३स्थावर नाम सूक्ष्म नाम ७५ अपर्याप्तनाम ७६ साधारणनाम ७७ अस्थिर नाम ७७ अशुन्न नाम ७ए डुर्नग नाम ए० डुस्वर नाम ए१ अनादेय नाम ए२

अपयश नाम ए३ ये तिरानवे भेद नाम कर्मकेहै अब इनका स्वरूप लिखतेहै. गतिनाम कर्म जिस कर्मके उदयसें जीव नरक १ तिर्यंच २ मनुष्य ३ देवताकी गति पर्याय पामें, नरकादि नाम कहनेमें आवे, और जीव मरे तब जिस गतिका गतिनामकर्म, आयुकर्म मुख्यपणे और गतिनाम कर्म सहचारी होवे है, तब जीवकों आकर्षण करके ले जातेहै, तब वो जीव तिस गति नाम और आयु कर्मके वश हुआ थका जहां उत्पन्न होना होवे तिस स्थानमें पहुंचेहै. जैसें मोरेवाली सूइकों चमक पाषाण आकर्षण कर्त्ता है और सूइ चमक पाषाणकी तर्फ जाती है, मोराभी सूइके साथही जाताहै, इस तरे नरकादि गतियोंका स्थान चमक पाषाण समान है, आयु कर्म और गतिनाम कर्म लोहकी सूइ समान है, और जीव मोर

समान है बीचमें पोया हुआहै, इस वास्ते परन्न वमें जीवको आयु और गतिनाम कर्म ले जातेहै, जैसा २ गतिनाम कर्मका जीवांने बंध करा है; शुन्न वा अशुन्न तैसी गतिमें जीव तिस कर्मके नदयसें जा रहता है, इस वास्ते जो अज्ञानी· योने कल्पना कर रखी है कि पापी जीवकों यम और धर्मी जीवकों स्वर्गके दूत मरा पीछे ले जातेहै तथा जवराइल फिरस्ता जीवांकों ले जाता है, सो सर्व मिथ्या कल्पना है, क्योंकि जब यम और स्वर्गीय दूत फिरस्ते मरते होगे, तब तिनकों कौन ले जाता होवेगा, और जीवतो जगतमें एक साथ अनंते मरते और जन्मते, तिन सबके लेजाने वास्ते इतने यम कहांसें आते होवेंगे और इतने फिरस्ते कहां रहते होवेंगे? और जीव इस स्थूल शरीरसें निकला पीछे किसीकेन्नी हाथमें

नही आताहै, इस वास्ते पूर्वोक्त कल्पना जिनोंने सर्वज्ञका शास्त्र नही सुना है तिन अज्ञानीयोंने करीहै. इस वास्ते मुख्य आयुकर्म और गतिनाम कर्मके उदयसेंही जीव परभवमें जाताहै. इति गतिनाम कर्म ४. अथ जातिनाम कर्मका स्वरुप लिखते है. जिसके उदयसें जीव पृथ्वी, पाणी अग्नि, पवन, वनस्पतिरूप एकेंद्रिय, स्पर्शेंद्रियवाले जीव उत्पन्न होतेहै. सो एकेंद्रिय जातिनाम कर्म १ जिसके उदयसें दोइंद्रियवाले कृम्यादिपणें उत्पन्न होवे, सो द्वींद्रिय जातिनाम कर्म २ एवं तीनेंद्रि कीडीआदि, चतुरिंद्रिय भ्रमरादि, पंचेंद्रिय नरक पंचेंद्रिय पशु गोमहिष्यादि मनुष्य देवतापणे उत्पन्न होवे, सो पंचेंद्रिय जातिनामकर्म एवं सर्व ए उदारिक शरीर अर्थात् एकेंद्रिय, द्वींद्रिय, त्रींद्रिय, चतुरिंद्रिय, पंचेंद्रिय तिर्यंच मनु-

ण्यके शरीर पावनेकी तथा ऊदारीक शरीरपण परिणामकी शक्ति, तिसका नाम ऊदारिक शरीर नाम कर्म १० जिसकी शक्तिसें नारकी देवताका शरीर पावे, जिससें मन इछित रुप वणावे तथा वैक्रिय शरीरपणे पुद्गल परिणामनेकी शक्ति सो वैक्रिय शरीरनाम कर्म ११ एवं आहारिक लब्धि वालेके शरीरपणे परिणामावे १२ तैजस शरीर अंदर शरीरमें उश्नता, आहार पचावनेकी शक्तिरुप, सो तैजस नाम कर्म १३ जिसकी शक्तिसें कर्मवर्गणाकों अपने अपने कर्म प्रकृतिके परिणामपणे परिणामावे सो कार्मण शरीर नाम कर्म १८ दो वाहू २ दो साथल ४ पीठ५ मस्तक ६ उरुछाती ७उदर पेट ८ ये आठ अंग और अंगोंके साथ लगा हुआ, जैसें हाथसें लगी अंगुलीसाथ लसें लगा जानु, गोमा आदि इनका नाम ऊपांग

है, शेष अंगुलीके पर्व रेखा रोम नखादि प्रमुख अंगोपांगहै; जिसके उदयसें ये अंगोपांग पावे और इनपणे नवीन पुद्गल परिणामावे ऐसी जो कर्मकी शक्ति तिसका नाम उपांग नाम कर्महै. उदारीकोपांग १५ वैक्रियोपांग, १६ आहारिकोपांग. १७ इति उपांग नामकर्म ॥ पूर्वे बांध्या हुआ उदारीक शरीरादि पांच प्रकृति और इन पांचोंके नवीन बंध होतेको पिछले साथ मेलकरके बंधावे जैसे राल लाखादि दो वस्तुयोंकों मिला देते है, तैसेही जो पूर्वापर कर्मका संयोग करे, सो बंधन नाम कर्म शरीरोंके समान पांच प्रकारकाहै. उदारिक बंधन वैक्रियबंधन इत्यादि एवं, २२ प्रकृति हुइ. पांच शरीरके योग्य विखरे हुइ पुद्गलांको एकठे करे, पीछे बंधन नामकर्म बंध करे, तिस एकठे करणेवाला कर्म प्रकृतिका नाम संघातन नामक-

र्म है, सो पांच प्रकारका है, उदारिक संघातन, वैक्रिय संघातन इत्यादि एवं,२७ सत्तावीस प्रकृति हुइ, अथ उदारिक शरीरपणे जो सात धातु परिणमी है तिनमें हमकी संधिको जो दृढ करे सो संहनन नामकर्म, सो छ ६ प्रकारका है, तिनमेंसें जहां दोनो हाम दोनों पासे मर्कट बंध होवे तिसका नाम नराच है, तिन दोनों हामोंके ऊपर तीसरा हाम पट्टेकी तरें जकड बंध होवे तिसका नाम रुषभ है, इन तीनो हामके भेदनेवाली ऊपर खीली होवे तिसका नाम वज्रहै, ऐसी जिस कर्मके उदयसें हामका संधी दृढ होवे तिसका नाम वज्ररुषभ नाराच संहनन नामकर्म है.२८ जहां दोनो हामोंके छेदमे मर्कटबंध मिले हुए होवे और उनके उपर तीसरे हाडका पट्टा होवे ऐसी हाम संधी जिस कर्मके उदयसें होवे. सो रुषभ

नाराच संहनन नामकर्म २९ जिन हाडोका मर्कटबंध तो होवे परंतु पट्टा और कीली न होवे, जिसके उदयसें सो नाराच संहनन नामकर्म, ३० जहां एक पासे मर्कटबंध और दूसरे पासे खीली होवे जिस कर्मके उदयसें सो अर्द्ध नराच संहनन नाम कर्म ३१ जैसें खीलीसें दो काष्ट जोडे होवे तैसें हाडकी संधी जिस कर्मके उदयसें होवे, सो कीलिका संहनन नामकर्म ३२ दोनो हाडोंके छेहडे मिले हुए होवे जिस कर्मसें सो सेवार्त्त संहनन नामकर्म ३३ जिस कर्मके उदयसें सामुद्रिक शास्त्रोक्त संपूर्ण लक्षण जिसके शरीरमें होवे तथा चारो अंस बराबर होवे, पलाठी मारके बेठे तब दोनों जानुका अंतर और दाहिने जानुसें वामा-स्कंध और वामेजानुसें दाहिनास्कंध और पलाठी पीठसें मस्तक मापता चारों डोरी बराबर होवे

और बत्तीस लक्षण संयुक्त होवे, ऐसा रुप जिस कर्मके उदयसें होवे तिसका नाम सम चतुरस्त्र संस्थान नामकर्म ३४ जैसें वड वृक्षका उपरला भाग पुर्ण होवेहै, तैसेंहै जो नाभीसें उपर संपुर्ण लक्षणवाला शरीर होवेऔर नाभीसें नीचे लक्षण हीन होवे, जिस कर्मके उदयसें सो निग्रोध परिमंडल संस्थान नामकर्म ३५ जिसका शरीर नाभीसें नीचे लक्षण युक्त होवे और नाभी सें उपर लक्षण रहित होवे, जिस कर्मके उदयसें सो सादिया संस्थान नामकर्म ३६ जहां हाथ पग मुख ग्रीवादिक उत्तम सुंदर होवे, और हृदय, पेट, पूठ लक्षण हीन होवे जिस कर्मके उदयसें सो कुब्ज संस्थान नामकर्म ३७ जहां हाथ पग लक्षण हीन होवे. अन्य अंग लक्षण संयुक्त अच्छे होवे जिस कर्मके उदयसें सो वामन संस्थान

नामकर्म ३८ जहां सर्व शरीरके अवयव लक्षण हीन होवे सो हुंमक संस्थान नामकर्म, ३९ जिस कर्मके उदयसें जीवका शरीर मषी; स्याही नील समान काला होवे तथा शरीरके अवयव काले होवे सो कृष्णवर्ण नामकर्म ४० जिसके उदयसें जीवका शरीर तथा शरीरके अवयव सूयकी पुछ तथा जंगाल समान नील अर्थात् हरितवर्ण होवे सो नीलवर्ण नामकर्म ४१ जिसके उदयसें जीव-का शरीर तथा शरीरके अवयव लाल हिंगलु स-मान रक्त होवे, सो रक्तवर्ण नामकर्म ४२ जिस कर्मके उदयसें जीवका शरीर तथा शरीरके अ-वयव पीत हरिताल, हलदी चंपकके फूलसमान पीले होवे पीतवर्ण नामकर्म ४३ जिस कर्म के उदयसें जीवका शरीर तथा शरीरके अवयव संख स्फटिक समान उज्वल होवे, सो शुक्लवर्ण

नामकर्म ४४ जिसके उदयसें जीवके शरीर तथा शरीरके अवयव सुरभि गंध अर्थात् कर्पूर, कस्तूरी,फूल सरीखी सुगंधी होवे, सो सुरभीगंध नामकर्म ४५ जिस कर्मके उदयसें जीवके शरीर तथा शरीरके अवयव दुरभीगंध लशुन मृतक शरीर सरीखो दुरभीगंध होवे, सो दुरभीगंध नामकर्म ४६ जिसके उदयसें जीवका शरीर तथा शरीरके अवयव नींब चिरायते सरीसा रस होवे, सो तिक्तरस नामकर्म ४७ जिसके उदयसें जीवका शरीरादि सूंठ, मरिचकी तरे कटुक होवे, सो कटुकरस नामकर्म ४८ जिसके उदयसें जीवका शरीरादि हरमे, बहेमें समान कसायला रस होवे सो कसायरस नामकर्म ४९ जिस कर्मके उदयसें जीवके शरीरादिका रस लिंबू, आम्ली सरीखा खट्टारस होवे, सो खट्टारस नामकर्म ५०

जिस कर्मके उदयसें जीवके शरीरादि खांड, सा-
करादि समान रस होवे, सो मधुररस नामकर्म
५१ इति रस नाम कर्म जिसके उदयसें जीवके
शरीरमें तथा शरीरके अवयव कठिन कर्कस गा-
यकी जीभ समान होवे, सो कर्कस स्पर्श नाम
कर्म ५२ जिसके उदयसें जीवका शरीर तथा
शरीरके अवयव माखणकी तरें कोमल होवे, सो
मृदु स्पर्श नाम कर्म ५३ जिसके उदयसें जीवका
शरीर तथा अवयव अर्क तूलकी तरें हलकें होवे
सो लघु स्पर्श नामकर्म ५४ जिसके उदयसें लो-
हेवत् भारी शरीरके अवयव होवे, सो गुरू स्पर्श
नामकर्म ५५ जिस कर्मके उदयसें जीवका शरीर
तथा अवयव हिम बर्फवंत् शीतल होवे, सोशीत-
स्पर्श नामकर्म५६ जिसके उदयसें जीवका शरीर
तथा अवयव उष्ण होवे सो उष्ण स्पर्श नाम-

कर्म ५७ जिस कर्मके उदयसें जीवका शरीर तथा शरीरावयव घृतकी तरें स्निग्ध होवे, सो स्निग्ध स्पर्श नाम कर्म ५८ जिस कर्मके उदयसें जीवका शरीरावयव राखकीतरे रूखे होवे सो रुक्ष स्पर्श नामकर्म ५९ इति स्पर्श नामकर्म नरक, तिर्यंच मनुष्य, देव ए चार जगें जब जीव गति नाम कर्मके उदयसें वक्र वांकी गति करे, तब तिस जीवकों वांके जातेको जो अपने स्थानमें ले जावे, जैसे बैलके नाकमें नाथ तैसे जीवके अंतराल वक्र गतिमें अनुपूर्वीका उदय तथा जो जीवके हाथ पगादि सर्व अवयव यथा योग्य स्थानमें स्थापन करे, सो अनुपूर्वी नामकर्म सो. चार प्रकारका है, नरकानुपूर्वी १ तिर्यंचानुपूर्वी २ मनुष्यानुपूर्वी ३ देवतानुपूर्वी ४ एवं सर्व ६३ हुइ, जिसके उदय सें हाथी वृषभकी तरे शुभ चलनेकी गति होवे

सो शुभ विहाय गति ६४ जिस कर्मके उदयसें ऊंटकी तरे बुरी चाल गति होवे, सो अशुभ विहाय गति नामकर्म ६५ जिसके उदयसें परकी शक्ति नष्ट हो जावे, परसें गंज्या पराभव करा न जाय, सो पराघात नामकर्म ६६ जिसके उदयसें श्वासोश्वासके लेनेकी शक्ति उत्पन्न होवे, सो उत्स्वास नामकर्म ६७ जिसके उदयसें जीवांका शरीर उष्ण प्रकाश वाला होवे, सूर्य मंडलवत्, सो आतप नामकर्म ६८ जिसके उदयसें जीवका शरीर अनुष्ण प्रकाशवाला होवे, सो उद्योत नामकर्म, चंद्र मंडलवत् ६९ जिसके उदयसें जीवका शरीर अति भारी अति हलका न होवे, सो अगुरु लघु नामकर्म ७० जिसके उदयसें चतुर्विध संघ तीर्थथापन करके तीर्थंकर पदवी लहे, सो तीर्थंकर नामकर्म ७१ जिस कर्मके

उदयसें जीवके शरीरमें हाथ, पग, पिंडी, साथ-ल, पेट, गाती, बाहु, गला, कान, नाक, होठ, दांत, मस्तक, केश, रोम शरीरकी नशांकी विचित्र रचना, आंख, मस्तक प्रमुखके पम्दें यथार्थ यथा योग्य अपने २ स्थानमें उत्पन्न करे होवे, संचयसें जैसें वस्तु बनतीहै तैसैंही निर्माण कर्मके उदयसें सर्व जीवांके शरीरोमें रचना होतीहै, सो निर्माणकर्म ७२ जिसके उदयसें जीव अधिक तथा न्यून अपने शरीरके अवयव करके पीडा पामे, सो उपघात नामकर्म ७३ जिसके उदयसें जीव थावरपणा छोडी हलने चलनेकी लब्धि शक्ति पावे सो त्रसनाम कर्म है ७४ जिस कर्मके उदयसें जीव सूक्ष्म शरीर छोडके बादर चक्षुग्राह्य शरीर पावे सो बादर नामकर्म ७५ जिस कर्मके उदयसें जीव प्रारंभ करी हुइ ४ ६ पर्याप्ति

अर्थात् आहार पर्याप्ति १ शरीर पर्याप्ति २ इंड्रिय पर्याप्ति ३ सासोत्स्वास पर्याप्ति ४ जाषा पर्याप्ति ५ मनः पर्याप्ति ६ पूरी करे, सो पर्याप्त नामकर्म ७६ जिसके उदयसें एक जीव एकही उदारिक शरीर पावे सो प्रत्येक नामकर्म ७७ जिस कर्मके उदयसें जिवके हाम दांतादि दृढ बंध होवे, सो थिर नामकर्म ७८ जिस कर्मके उदयसें नाजिसें उपरल्या जाग शरीरका पावे, दुसरेके तिस अंगका स्पर्श होवें तोजी बुरा न माने सो शुन नामकर्म ७९ जिस कर्मके उदयसें विना उपकारके कस्यांजी तथा सबंध विना वल्लज लागे, सो सौजाग्य नामकर्म ८० जिस कर्मके उदयसें जीवका कोकिलादी समान मधुर स्वर होवे, सो सुस्वर नामकर्म ८१ जिस कर्मके उदयसें जीवका वचन सर्वत्र माननीय होवे सो आदेय नामकर्म

७२ जिस कर्मके उदयसें जगतमें जीवकी यश-कीर्त्ति फैले, सो यश कीर्त्ति नामकर्म ७३ जिस कर्मके उदयसें जीव त्रसपणा गेमी स्थावर पृथ्वी पानी, वनस्पत्यादिकका जीव हो जावे, हली चली न सके, सो स्थावर नामकर्म ७४ जिस कर्मके उदयसें सूक्ष्म शरीर जीव पावे सो सूक्ष्म नामकर्म ७५ जिस कर्मके उदयसें प्रारंभी हुइ पर्याप्ति पुरी न कर सके, सो अपर्याप्त नामकर्म. ७६ जिस कर्मके उदयसें अनंते जीव एक शरीर पामे, सो साधारण नामकर्म ७७ जिस कर्मके उदयसें जीवके शरीरमें लोहु फिरे हाडादि, सिथल होवे, सो अथिर नामकर्म ७८ जिस कर्मके उदयसें नाभीसें नीचेका अंग उपांगादि पावे, सो अशुभ नामकर्म ७९ जिस कर्मके उदयसें जीव अपराधके विना करेही बुरा लगे, सो दौर्भाग्य

आदी कुल उत्तम बल विशिष्ट रुप ऐस्वर्य तपो गुण विद्यागुण सहित होवे, सो उंचगोत्र १ तथा भिक्षाचरादिक कुल जाती आदीक लहे सो नीचगोत्र २ अथ उंचगोत्रके बंध हेतु ज्ञान, दर्शन, चारित्रादीक गुण जिसमें जितना जाने, तिसमे तितना प्रकाशकर गुण बोले, और अवगुण देखके निंदे नही, तिसका नाम गुण प्रेक्षीहै, गुणप्रेक्षी होवे, जातिमद १ कुलमद २ बलमद ३ रूपमद ४ सूत्रमद ५ ऐश्वर्यमद ६ लाभमद ७ तपोमद ८ ये आठ मदकी संपदा होवे तोभी मद न करे, सूत्र सिद्धांत तिसके अर्थके पढने पढानेकी जिसकों रुचि होवे, निराहंकारसें सुबुद्धि पुरुषकों शास्त्र समझावे, इत्यादि परहित करनेवाला जीव उंच गोत्र बांधे. तीर्थंकर सिद्ध प्रवचन संघादिकका उं तरंगसें भक्तीवाला जीव उंचगोत्र बांधे, इन पू.

वोंक्त गुणोसें विपरीत गुणवाला अर्थात् मत्सरी १ जात्यादि आठ मद सहित अहंकारके उदयसें किसीको पढावें नही, सिद्ध प्रवचन अरिहंत चैत्यादिकको निंदा करे, नक्ती न होवे, सो जीव हीन जाती नीच गोत्र बांधे ॥ इति गोत्रकर्म ७.

अथ आठमा अंतराय कर्मका स्वरूप लिखतेहै, तिसके पांच नेद है. जिस कर्मके उदयसें जीव शुद्ध वस्तु आहारादिकके हूएनी दान देंनेकी इछानी करे, परंतु दे नही सके, सो दानांतराय कर्म १ जिस कर्मके उदयसें देनेवालेके हूएनी इष्ट वस्तु याचनेसेंनी न पावें. व्यापारादिमें चतुरनी होवे तोनी नफा न मिले, सो लानांतराय कर्म २ जिस कर्मके उदयसें एक वार नोगने योग्य फूलमाला मोदकादिकके हूएनी नोग न कर सके, सो भोगांतराय कर्म ३ जिस कर्मके

खेहै. यह कहना महा मिथ्याहै, क्योंकि कार्यानु मानसें जो जैनीयोने कर्मके ल्नेद मानेहै वे सर्व सिद्ध होतेहै, और पूर्वोक्त सर्व कर्मके ल्नेद सर्वज्ञ वीतरागने प्रत्यक्ष केवल ज्ञानसें देखेहै इन कर्मोंके सिवाय जगतकी विचित्र रचना कदापि नही सिद्ध होवेगी, इस वास्ते सुज्ञ लोकोकों अरिहंत प्रणीत मत अंगीकार करना उचितहै, और ईश्वर वीतराग सर्वज्ञ किसी प्रमाणसेंल्नी जगतका कर्त्ता सिद्ध नही होताहै, जिसका स्वरूप ऊपर लिख आये है.

प्र. १५५–जैन मतके ग्रंथ श्री महावीर जीस लेके श्री देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमण तक कंठाग्र रहेतेहै क्योंकर माने जावे, और श्वेतांबरमत मुल का है और दिगंबर मत पीछेसें निकला, इस कथनमें क्या प्रमाण है?

उ.—जैन मतके आचार्य सर्व मतोंके आचार्योंसें अधिक बुद्धिमान थे, और दिगंवराचार्यों सें श्वेतांवर मतके आचार्य अधिक बुद्धिमान् आत्मज्ञानी थे अर्थात् वहुत कालतक कंठाग्र ज्ञान रखनेमें शक्तिमान थे, क्योंकि दिगंवर मतके तीन पुस्तक धवल ७०००० श्लोक प्रमाण १ जयधवल ६०००० श्लोक प्रमाण १ महाधवल ४०००० श्लोक प्रमाण ३ श्री वीरात् ६८३ वर्षे ज्येष्ठशुद ५ के दिन भूतवलि १ पुष्पदंतनामे दो साधुयोंनें लिखे थे, और श्वेतांवर मतके पुस्तक गिणतीमें और स्वरूपमें अलग अलग एक कोटी १०००००० पांचसो आचार्योंने मिलके और हजारों सामान्य साधुयोंने श्री विरात् ९८० वर्षे वल्लभी नगरीमें लिखे थे, और वौद्धमतके पुस्तकर्ता श्री विरात् ओमेसें वर्षों पीछेही लिखे गयेथे, जिनोंकी बुद्धि

अल्प थी तिनोनें अपने मतके पुस्तक जलदीसें लिख लीने, और जीवोकी महा प्रौढ धारणा करनेकी शक्तिवाली वुद्धिथी तिनोंने पीछेसें लिखे. यह अनुमानसें सिद्ध है, और दिगंवर मतमें श्री महावीरके गणधरादि शिष्योसें लेके ५८५ वर्ष तकके काल लगे हुए हजारों आचार्योंमेसें किसी आचार्यका रचा हुआ कोइ पुस्तक वा किसी पुस्तकका स्थल नही है इस वास्ते दिगंवर मत पीछेसें उत्पन्न हुआ है.

प्र. १५६–देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमणनें जो ज्ञान पुस्तकोंमें लिखाहै, सो आचार्योंकी अविछिन्न परंपरायसें चला आया सो लिखा है, परं स्वकपोल कल्पित नही लिखा, इसमें क्या प्रमाण है. जिससें जैनमतका ज्ञान सत्य माना जावे.

उ.–जनरल कनिंनहाम साहिव तथा मा-

क्तर हॉरनल तथा डाक्तर बूलर प्रमुखोंनें मथुरा नगरीमेंसें पुरानी श्री महावीरस्वामीकी प्रतिमाकी पलांठी ऊपरसें तथा कितनेक पुराने स्तंनो ऊपरसें जो जूने जैनमत संबंधी लेख अपनी स्वच्छबुद्धिके प्रन्नावसें वांचके प्रगट करे है, और अंग्रेजी पुस्तकोंमें छापके प्रसिद्ध करेहै तिन जूने लेखोंसें निसंदेह सिद्ध होताहै कि, श्रीमहावीरजीसें लेके श्री देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमण तक जैन श्वेतांवर मतके आचार्य कंगाग्र ज्ञान रखनेमें वहुत उद्यमी और आत्मज्ञानी थे, इस वास्ते हम जैन मतवाले पूर्वोक्त यूरोपीयन विद्धानोका वहुत उपकार मानते है, और मुंवइ समाचार पत्रवाला न्नी तिन लेखोंकों वांचके अपने संवत १९४४ के वर्षाके चार मासके एक प्रतिदिन प्रगट होते पत्रमें लिखताहै कि, जैनमतका कल्पसूत्र कितनेक

लोक कल्पित मानते थे, परंतु इन लेखोंसें जैन मतका कल्पसूत्र सच्चा सिद्ध होता है.

प्र. १५७—वे लेख कौनसेंहै, जिनका जिकर आप ऊपरले प्रश्नोत्तरमें लिख आये है, और तिन लेखोंसें तुमारा पूर्वोक्त कथन क्योंकर सिद्ध होता है !

उ.—वे लेख जैसें डाक्तर बूलर साहिबने सुधारके लिखे है और जैसें हमकों गुजराती भाषांतरमें भाषांतर कर्त्ताने दीयेहै तैसेंही लिखतेहै, येह पूर्वोक्त लेख सर ए. कनिंगहामकें आर्चिओलोजिकल(प्राचीन कालकी रही हुइ वस्तुयों संबंधी) रिपोर्टका पुस्तक ३ आठमेमें चित्र १३-१४ तेरमे चौदमें तक प्रगट करे हुए मथुरांके शिला लेख तिनमें केवल जैन साधुयोंका संप्रदाय आचार्योंकी पंक्तिया तथा शाखायों लिखीहुइहै, के-

वल इतनाही नही लिखा हुआहै, किंतु कल्पसु-
त्रमें जे नवगण (गन्न) तथा कुल तथा शाखायों
कहीहै, सोभी लिखी हुइहै, इन लेखोंमें जो सं-
वत् लिखा हुआ है, सो हिंदुस्थान और सीथीया
देशके वीचके राजा कनिश्क १ हविश्क २ और
वासुदेव ३ इनके समयके संवत् लिखे हुएहै और
अव तक इन संवतोकी शरूआत निश्चित नही
हुइहै, तोभी यह निश्चय कह सकते है कि येह
हिंदुस्थान और सीथीया देशके राजायोंका राज्य
इसवीसनके प्रथम सैकेके अंतसें और दूसरे सैके
के पहिले पौणेभागसें कम नही ठरा सक्तेहै, क्यों
कि कनिश्क सन इशवीसनके ७८ वा ७९ में व
र्पमें गद्दी ऊपर वैठा सिद्ध हुआहै, और कितनेक
लेखोंसे इन राजायोंका संवत् नही है, सो लेख
इन राजयोंके राज्यसें पहिलेका है, ऐसें फाक्तर

बूलर साहिब कहता है.

प्रथम लेख सुधरा हुआ नीचे लिखा जाता है. सिद्धं। सं २०। ग्रामा १। दि १०+५। कोट्टियतो, गणातो, वाणियतो, कुलतो, वएरितो शाखातो, शिरिकातो, त्ततितो, वाचकस्य अर्य्यसंघ सिंहस्य निर्व्वर्त्त नंदत्तिलस्य...वि.—लस्य कोठुंबिकिय, जयवालस्य, देवदासस्य, नागदिनस्य च नागदिनाये, च मातु श्राविकाये दिनाये दानं। इ। वर्द्धमान प्रतिमा. इस पाठका तरजुमा रूप अर्थ नीचे लिखते है. "फतेह" संवत् २०का उश्न कालका मास १ पहिला मिति १५ ज्यवल (जय पाल)की माता बी...लाकी स्त्री दतिलकी (बेटी) अर्थात् (दिन्ना अथवा दत्ता) देवदास और नागदिन्न अथवा (नागदत्त) तथा नागदिना (अर्थात् नागदिन्ना अथवा नागदत्ताकी संसारिक स्त्री

शिष्यकी वक्षीस कीर्तिमान् वर्द्धमान प्रतिमा (यह प्रतिमा) कौटिक गच्छमेंसें वाणिज नामे कुलमेंसें वैरी शाखाका सीरीका जागके आर्य संघ सिंहकी निर्वरतन है, अर्थात् प्रतिष्ठित है. ॥ इति माक्तर बूलर ॥

अथ दुसरा लेख. नमो अरहंतानं, नमो सिद्धानं, सं. ६०+ २ ग्र. ३ दि. ५ एताये पुरवायेरारकस्य अर्यककसर्ध स्तस्य शिष्या आतापेको गहवरी यस्य निर्वतन चतुवस्यर्न संघस्य या दिन्ना पदिन्ना (जो.१) ग (१ ? वैहिका ये दत्ति ॥ इसका तरजुमा ॥ अरहंतने प्रणाम, सिद्धने प्रणाम, संवत ६२ यह तारीख हिंदुस्थान और सीथीआ बीचके राजायोंके संवत्के साथ सबंध नही रखती है, परंतु तिनोंसें पहिलेके किसी राजेका संवत् है, क्योंकि इस लेखकी लिपी बहुत असल

है. ग्रष्म कालका तिसरा मास ३ मिति ५ ऊपरकी तारीखमें जिस समुदायमें चार वर्गका समावेश होता है तिस समुदायके उपभोग वास्ते अथवा हरेक वर्गके वास्ते एकैक हिस्सा इस प्रमाणसें एक । था। देनेमें आयाथा । था । यह क्या वस्तु होवेगी सो मैं नही जानता हुं, पति भोग अथवा पति भाग इन दोनोमेंसें कौनसा शब्द पसिंद करने योग्य है के नही, यहभी मैं नही कह सक्ताहूं (आ) आतपीको गहवरीरारा (राधा) कारहीस आर्य—कर्कसघस्त (आर्य—कर्क सघशीत)का शिष्यका निर्वतन (होइके) वइहीक (अथवा वइहीता)की बक्षीस, यह नाम तोडके इस प्रमाणे अलग कर सक्ते है, आतपीक—ओगहब—आर्य पीछेके भागमें यह प्रगट है, कि निर्वतन याके साथ एकही विभक्तिमें है, तिस वास्ते अन्य

इसरे लेखोमेंन्नी वहुत करके ऐसीही पद्धतिके लेख लिखे हुए है, निर्वर्तयतिका अर्थ सामान्य रीते सो रजु करता है, अथवा सो पूरा करता है एसा है, तिससें वहुत करके ऐसे वतलाता है के दीनी हुइ वस्तु रजु करनेमें आइथी अर्थात् जिस आचार्यका नाम आगे आवेगा तिसकी इछासें अर्पण करनेमें आइथी, अथवा जिससें सो पुरी करनेमें आइथी. गणतो, कुलतो इत्यादि पांचमी विभक्तिके रुप वियोजक अर्थमें लेने चाहिये, स्पेइजरका संस्कृतकी वाक्य रचनाका पुस्तक ११६ । १ देखो । इति म्हाक्तर वूलर. अथ तीसरा लेख॥

सिद्धं महाराजस्य कनिष्कस्य राज्ये संवत्सरे नवमें ॥ए॥ मासे प्रथ १ दिवसे ५ अस्यां पूर्वाये कोटियतो, गणतो, वाणायतो, कुलतो, वइरीतो, साखातो वाचकस्य नागनंदि सनिर्वरतनं व्रह्मधू-

तुये न्नद्दिमितस कुटुंबिनिये विकटाये श्री वर्द्धमानस्य प्रतिमा कारिता सर्व सत्वानं हित सुखाये, यह लेख श्री महावीरकी प्रतिमा ऊपरहै ॥ इस का तरजुमा नीचे लिखते है ॥ फतेह महाराजा कनिश्कके राज्यमें ए नवमें वर्षमेंका १ पहिले महीनेमें मिति ५ पांचमीमें ब्रह्माकी बेटी और न्नद्दिमित (न्नद्दिमित्र)की स्त्री विकटा नामकीनें सर्व जीवोंके कल्याण तथा सुखके वास्ते कीर्त्तिमान वर्द्धमानकी प्रतिमा करवाइ है, यह प्रतिमा कोटिक गण (गच्छ) का वाणिज कुलका और वइरी शाखाका आचार्य नागनंदिकी निर्वतन है, (प्रतिष्टितहै), अब जो हम कल्पसूत्र तर्फ नजर करीये तो तिस मूल प्रतके पत्रे । ८१–८५। इस. बी. इ. वाल्युम (पुस्तक) २२ पत्रे २९२ हमकों मालम होताहकि सुठिय वा सुस्थित नामे आ-

चार्य श्री माहावीरके आठमें पट्टके अधीकारीने कौटिक नाम गण (गड़) स्थापन कराआ, तिसके विन्नाग रूप चार शाखा तथा चार कुल हूए, जिसकी तीसरी शाखा वइरीथी और तीसरी वाणिज नाम कुलथा यह प्रगट हैकि गण कुल तथा शाखाके नाम मथुरांके लेखोंमें जो लिखेहे वे कल्पसूत्रके साथ मिलते आतेहै. कोटियकुवक कोमीयका पुराना रूपहै, परंतु इस वातकी नकल लेनी रसिकहैकि वइरी शाखा सीरीकान्नत्ती (श्री कान्नक्ति)जो नंवर ६ के लेखमें लिखी हूइहै तिसके न्नागका कल्पसूत्रके जाननेमें नही था, अर्थात् जव कल्पसूत्र हुआथा तिस समयमें सो न्नाग नही था. यह खाली स्थान ऐसाहैकि जो मुहकी दंत कथा (परंपरायसें चला आया कथन) सें लिखी हुइ यादगीरीसें मालुम होता है. इति

म्हाक्तर बूलर ॥

अथ चौथा लेख ॥ संवत्सरे ए० व......स्य कुटुंबानि. वदानस्य वोधुय...क...गणता ...वहुकतो, कालातो, मझमातो, शाखाता... सनिकाय त्नतिगालाए अवानि...सि.८=स ५ हे १ दि १० +२ अस्य पूर्वा येकोटो...इस लेखकी लीनी हुइ नकल मेरे वसमे नहीहै, इस वास्ते इसका पूर्ण रूप मैं स्थापन नही कर शकताहूं, परंतु पंक्तिके एक टुकरूके देखनेसें ऐसा अनुमान हो सक्ताहैके यह अर्पण करनेका काम एकस्त्रीसें हूआथा, ते स्त्री एक पुरुषकी वहु (कुटुंवनी) तरीके और दूसरेके बेटेकी वहु (वधु) तरीके लिखने में आइथी ॥ दूसरी पंक्तिका प्रथम सुधारे साथ लेख नीचे लिखे मुजब होताहै ॥ कोटीयतो गणतो (प्रश्न) वाहनकतो कुलतो मझमातो साख-

तो ...सनीकायेके समाजमें कोटीय गछके प्रश्न- वाहनकी मध्यम शाखामेंके कोटीय और प्रश्नवा हनकये दो नाम होवेगें, ऐसें मुझकों निसंदेह मालुम होताहै, क्योंकी इस लेखकी खाली ज गातिस पुर्वोक्त शब्द लिखनेसें बराबर पूरी होजाती है, और दूसरा कारण यहहैकि कल्पसूत्र एस. बी, इ.पत्र–२९३ मेमें मध्यम शाखा विषयक हकीकतभी पूर्वोक्तही सूचन करतीहै, यह कल्प सूत्र अपनेकों एसे जनाताहैकि सुस्थित और सु- प्रतिबुधका दूसरा शिष्य प्रीयग्रंथ स्थविरें मध्यमा शाखा स्थापन करीथी, हमकों इन लेखोपरसे मा लुम होताहैके प्रोफेसर जेकूका करा हुआ गण, कुल तथा शाखायोंकी संज्ञाका खुलासा खराहै, और प्रथम संज्ञा शाला बतातीहै, दूसरी आचार्यो की पंक्ति और तीजी पंक्तिमेंसें अलग हो गइ,

सके एक कुलके नामोंका अपभ्रंसरूप नंवर १० वाला चित्र चौदवेमें १४ मालुम होता है, जहां यथार्थ नक्कल नीचे लिखे प्रमाणे वांचनेमें आती है ॥ पंक्ति पहिली ॥ स=४० उग्र २ दी २० एतासय पुरवायेवरणेगतीपेतीवमीकाकुलवचकस्य रेहेनदीस्यसासस्यसेनस्यनीवतनंसावकद ॥ पंक्ति दूसरी ॥ पशानवधयगीह...ग..न..प्रपा...ना... मात...॥ मैं निसंदेह कहताहुंके गती भूलसें वांचनेमें आया है, और सो खरेखरा गणे है, जेकर इसतरें होवेतो वरणेभी इस सरीषाहीशब्द चारणेके वदले भूलसें वांचनेमें आया होना चाहिये, क्योंकि यह गण जो कल्पसूत्र एस,वी. इ. वाल्युम पत्रे २९१ प्रमाणे आर्य सुहस्तिका पांचमा शिष्य श्री गुप्तसें स्थापन हूआथा, तिसका दुसरा कुल प्रीतिधार्मिक है, (पत्रे. २९२) यह स

इजसें मालुम होता हैकि, यह नाम पेतिवमिक कुलके आचार्यका संयुक्त नाम पेतिवमिक कुल वाचकस्यमें गुप्त रहा हूआ है. जोके पेतिवमिक संन्नवित शब्द है, और संस्कृत प्रइति वर्मिकके दर्शक दाखल प्रीतिवर्मनका साधिक शब्द तद्धित गिणतीमें करीएतोन्नी में ऐसे मानताहूंके यह यथार्थ नकलकी खामी ऊपर तथा ध और व की वीचमें निजीकके मिलते हुए ऊपर विचार करतां सो वदलाके पेतिधमिक होना चाहिये, वांचणेमें दूसरी न्नूल यह आचार्यके नाममे जहां ह के ऊपर ए—मात है सो असली पिछले व अक्षरके पेटेंकी है, इस नामका पहिला न्नाग अवस्य रेहे नही था, परंतु रोह था के जो रोह गुप्त रोहसेन और अन्य शब्दोमें मालुम पमता है. दू

सरी पंक्तिमें थोमासाही सुधारनेका है, जो प्रपा यह अक्षर शुद्ध होवें और तिनका शब्द बनता होवे, तबतो अर्पणकरा हुआ पदार्थ एक पाणी पीनेका गाम होना चाहिये, अब में नीचे लिखे मुजब थोमासा बीचमें प्रक्षेप करना सूचन करताहुं ॥ स ४७ ग्र २ दि १० एतस्ये पुरवाये चार णेगणे पेतीधमिक कुलवाचकस्य, रोहनदीस्य, सिसरय, सेनस्य, निवतनं सावक. दर................प्रपा (दी) ना...इसका तरजुमा नीचे लिखते है ॥

संवत् ४७ उष्ण कालका महीना २ दुसरा मिति १० उपर लिखी मितिमें यह संसारी शिष्य द...का.....।.....यह एक पाणी पीनेका गाम देनेमें आयाथा,यह रोहनदी (रोहनंदि)का शिष्य और चारण गणके पेतिधमिक (प्रइतिधार्मिक)कु-

लका आचार्य सेनका निवतन (.है) ॥८ पिछला लेख जो ऐसीही रीतोसें कल्पसूत्रमें जनाया हुआ एक गण कुल तथा शाखाका कुछक अपभ्रंस और करे हुए नामाकों बतलाता है, सो नंबर २० चित्र १५का लेख है, तिसकी असली नकल नीचे लिखे मूजब वंचाती है, ॥ पंक्ति पहेली ॥सिद्ध ॥ नमो अरहतो महावीरस्ये देवनासत्य राज्ञा वासुदेवस्य संवतसरे। ए. + ८। वर्षे मासे दिवसे १०+१ ए तास्या ॥ पंक्ति दूसरी॥ पूर्ववया अर्यरेहे नियातो गण पुरीधका कुल व पेत पुत्रीका ते शाखातो गणस्य अर्य—देवदत्त. वन. ॥ पंक्ति तीसरी ॥ रयय—क्शेमस्य ॥ पंक्ति ४ ॥ प्रकगीरिणे ॥पंक्ति ५ मी ॥ किहदिये प्रज. ॥ पंक्ति ६ छठी॥तस्य प्र वरकस्यधीतु वर्णस्य गत्व कस्यस. युय मित्र [१] स......दत्तगा ॥ पंक्ति ७ मी ॥ ये...वतोमहे

तीसरी पंक्तिसें लेके सातमी पंक्तिताइंतो सुधारा हो सके तैसा है नही, और मैं तिनके सुधारनेकी मेहनतभी नही करता हुं, क्योंके मेरे पास मुझकों मदत करे तैसी तिसकी लीनी हुइ नकल नही है, इतनीही टीका करनी वस है के छठी पंक्तिमें वेटीका शब्द धितु और तिस पीछेका मयुयलो वहुलतासें (माताका) मातुयेके वदले भूलसें बांचनेमें आया है, सो लेख यह वतलाता है के यह अर्पणभी एक स्त्रीने करा था ॥ पंक्ति १। ३ ॥ दूसरी तीसरीमें लिखे हुए नामवाले आचार्योंके नामों यह वकील साथका सबंध अंधेरेमें रहता है पिछले वार विंडुयेकी जगे दूसरा नमस्कार नमो भगवतो महावीरस्यकी प्रायें रही हूइ है, प्रथम पंक्तिमें सिद्धओ के वदले निश्चित शब्द प्रायें करके लिए है, सर ए. कनिंगहामने भी वांचा

हुआ अक्षर मेरी समझ मूजब विराम के साथैं म है, दूसरा महावीरास्येकी जगें महावीरस्य धरना चाहिये, दुसरी पंक्तिमें पूर्व वयाके बदले पूर्ववाये गणके बदले गणातो, काकुलवके बदले० काकुलतो०टे के बदले पेतपुत्रिकातो, और गण-स्यके बदले गणिस्य वांचनेकी ज़रूरीआत हरेक कोइकों प्रगट मालुम पड़ेगी, नामोके संबंधमें अर्य-रेहनीय अशक्य रूप है, परंतु जेकर अपने ऐसे मानीयेके हकी ऊपर इका असल खरेखरा पिछले चिन्हके पेटेका है, तद पीछे सो अर्य-रोहनीय (आर्य रोहनके तावेका) अथवा आर्य-रोहनने स्थाप्या हुआ, अर्थात् संस्कृतमें आर्य रोहण होता है, इस नामका आचार्य जैन दंत कथामें अच्छितरे प्रसिद्ध है, कल्पसूत्र एस. वी. ६.

पत्र १ए१ में लिखे मूजब सो आर्य सुहस्तिका पहिला शिष्य था, और तिसने उद्देह गण स्थापन करा था. इस गणकी चार शाखा और ठकुल हुएथे, तिसकी चौथी शाखाका नाम पूर्ण पत्रिका मुख्य करके तिसके विस्तारकी बाबतमें इस लेखके नाम पेतपुत्रिकाके साथ प्रायें मिलता आताहै, और यह पिछला नाम सुधारके तिसकों पोनपत्रिका लिखनेमें मैं शंकाजी नही करताहूं. सोइ नाम संस्कृतमें पौर्णपत्रिकाकी बराबर होवेगी, और सो व्याकरण प्रमाणे पूर्ण पत्रिका करते हूए अधिक शुद्धनाम है, इन ठहों कुलोमेसें परिहासक नामजी एक कुलहै, जो इस लेखमें कर गए हूए नाम पुरिध-कके साथ कुछक मिलतापणा बतलाताहै, दूसरे मिलते रूपों ऊपर विचार करता हूआ मैं यह संजवित मानताहूं के,

यह पिछला रूपपरिहा. क के बदले भूलसें वांचनेमें आयाहै; इसरी पंक्तिके अंतमे पुरुषका नाम प्रायें छठी विभक्तिमें होवे और देवदत्त व सुधारकें देवदत्तस्य कर सक्तेहै ॥ ऐसें पुर्वोक्त सुधारेंसें प्रथम दो पंक्तियां नीचे मुजब होतीहै ॥ १ सिद्ध (म्) नमो अरहतो महावीर(अ) स्य् (अ) देवनासस्या- र, पुर्वव्, (ओ) य् (ए) अयूय–र् (ओ) ह् (अ) नियतोगण (तो) पू (अ) रि (हास क् (अ) कुल (तो) पू (ओन्) अपू (अ) त्रिकात् (ओ) साखातोगण (इ) स्य अर्यूय–देवदत्त (स्य) न......इसका तरजुमा नीचे लिखे मुजब होवेगा.

"फतेह" देवतायोंका नाश करता अरहत महावीरकों प्रणाम (यह गुणवाचक नामके खरेपणेमें मेरेकों बहुत शकहै, परंतु तिसका सुधारा करनेकों मैं असमर्थहूं) राजा वासुदेवके संव·

तूके ९८ मे वर्षमें वर्षाऋतुके चौथे महीनेमें मिति ११ मीमें इस मितिमें ....परिहासक (कुल) में कापोन पत्रिका (पौर्णपत्रिका) शाखा का अरयूप—रोहनें (आर्यरोहने) स्थापन करी शाला (गण) सेंका अरयय देवदत (देवदत्त) ए शालाका मुख्य गणि ॥ येह लेख एकल्ले देखनेसें यह सिद्ध करतेहैके मथुराके जैन साधुयोंने संवत् ५ सें ९८ अगानवें तक वा इस्वीसन ८३। वा ८४ सें लेकें सन इसवी १६६ वा १६७ के वीचमें जैनधर्माधिकारी हुदेवालोंने परस्पर एक संप कराथा, और तिनमेंसें कितनेक गच्छोंमें मतानुचारीयोमें विभाग पमाया, और सो भाग हरेक शाला (गण) का कितनेक तिसके अंदर भाग हूए थे. ऊपर लिखे हूए नामों वाले पुरुषांको वाचक अथवा आचार्यका इलकाब मिलताहै, जो बुद्धिष्ट

नाणकके साथ मिलताहै और सो इलकाव (पद वीका नाम) वहुत प्रसिद्ध रीतीसें जैनके जो यति लोक साधु धर्म संवंधी पुस्तकों श्रावक साधुयों कों समझने लायक गिणनेमे आतेथे तिनकों देनेमें आतेथे, परंतु जो साधु गणि (आचार्य) एक गछका मुखीया कहनेमें आताथा, तिसका यह नारी इलकाव था, और हालमेंभी पिछली रीती प्रमाणे वडे साधु मुख्य आचार्यकों देनेमें आता है. शाला [गणो] मेसें कोटिक गणके वहुत फांटे है, और तिसके पेटे भाग होके दो कुल, दो शाखायों और एक भक्ति हुआहै, इसवास्ते तिसका वडा लंवा इतिहास होना चाहिये, और यह कहना अधिक नही होवेगा, क्योंकि लेखोंके पुरावे ऊपरसें तिसकी स्थापना अथवा ईसवी सनकी शूरूआतसें पहिले थोडेमें थोडा काल एक संक-

रा [सो वर्ष] में हूइथी, वाचक और गणि सरी पे इलकावोंकी तथा ईसवी सन पहिले सैकेके अंतमें असलकी शालाकी हयाती वतलायेहैके तिस वखतमें जैन पंथकी वहुत मुदत हुआं चलती आत्मज्ञानीकी हयाती हो चुकीथी [कितनेहीका लसें कंठाग्र ज्ञानवान् मुनियोकि परंपरायसें संतति चली आतीथी] तिस संततिमें साधु लोक तिस वखतमें अपने पंथकी वृद्धिकी वहुत हुस्यारीसें प्रवृत्ति राखतेथे, और तिस कालसें पहिलेभी राखी होनी चाहिये, जेकर तिनोमें वाचक थे तो यहभी संभवितहैके कितनेक पुस्तक वंचानेसीखाने वास्ते वरावर रीतीसें मुकरर करा हूआ संप्रदाय तथा धर्म सबंधी शास्त्रभी था. कल्पसूत्रके साथ मिलनेसें येह लेखों श्वेतांवरमतकी दंत कथाका एक वडा भागकों [श्वेतांबरके

शास्त्रके वमे न्नागकों] वनावटके शक [कलंक] सें मुक्त करते है, [श्वेतांवर शास्त्रके वहुत हिस्से वनावटके नही है किंतु असली सच्चे है] और स्थिरविरावलिकें जिस न्नाग ऊपर हालमे हम अखितयार चला शक्ते है, सो न्नाग निःकेवल जैनके श्वेतांवर शाखाकी वृद्धिका न्नरोंसा राखने लायक हवाल तिसमें हयाती सावीत कर देता है, और तिस न्नागमेंन्नी ऐसीयां अकस्मात् न्नूले तथा खामीयों मालुम होती है, के जैसे कोइ कंगाग्रकी दंत कथाकें हालमें लिखता हुआवीचमें रही जाए ऐसें हम धार सक्तेहै, यह परिणाम (आशय) प्रोफेसर जेकोवी और मेरी माफक जे सखस तकरार करता होवे के जैन दंत कथा (जैन श्वेतांवरके लिखे हुए शास्त्रोंकी वात) टीकाके असाधारण कायदे देठ नही रखनी चाहि

ये, अर्थात् तिसमेके इतिहास संबंधी कथनो अ-
थवा दूसरे पंथोकी दंतकथामेंसें मिली हुइ दूसरी
स्वतंत्र खबरोंसें पुष्टी मिलती होवे तो, सो मा
ननी चाहिये; और जो ऐसी पुष्टी न होवे तो
जैनमतकी कहनी (स्यादवा) तिसकों लगानी
चाहिये, तैसें सखसोंकों उत्तेजन देनेवाला है. क-
ल्पसूत्रकी साथ मथुराके शिला लेखोंका जो मि
लतापणा है, सो डुसरी यह बातभी तब लाता
है कि इस मथुरां शहरके जैनलोक श्वेतांबरी थे॥
इति डाक्तर बूलर ॥ अब हम (इस ग्रंथके कर्त्ता)
भी इन लेखोंकों वांचके जो कुछ समझे है सोइ
लिख दिखलाते है ॥ जैनमतके वाचक १ दिवा-
कर २ क्षमाश्रमण३ यह तीनो पदके नाम जो
आचार्य इग्यारे अंग, और पूर्वोके पढे हुएथे ति
नकों देनेमें आतेथे, जैसें उमास्वातिवाचक १

सिद्धसेन दिवाकर २ देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमण ३; इस वास्ते मथुरांके शिला लेखोंमें जो वाचकके नामसें आचार्य लिखे है, वे सर्व इग्यारे अंग और पूर्वोंके कंठाग्र ज्ञानवाले थे, और सुस्थित नामे आचार्यका नाम बुलरसाहिबने लिखाहै सो सु-स्थित नामे आचार्य विरात् तीसरे सैकेमेंहुआ है, तिससें कोटिक गणकी स्थापना हुइ है. और जो वइरी शाखा लिखी है सो विरात् ५८५ वर्षे स्वर्ग गये, वज्रस्वामीसें स्थापन हुइथी वइरी शाखाके विना जो कुल और शाखाके आचार्य स्थापनेवालें सुस्थित आचार्यके लगभग कालमें हुए संभव होतेहै, इन लेखोंको देखके हम अपने भाइ दिगंबरोंसें यह विनती करते है कि जरा मतका पक्षपात छोडके इन लेखोंकी तर्फ जरा ख्याल करोके इन लेखोंमें लीखे हुए गण. कुल शाखाके

नाम श्वेतांबरोंके कल्पसूत्रके साथ मिलते है, वा तुमारेभी किसी पुस्तकके साथ मिलते है, मेरी समझमें तो तुमारे किसी पुस्तकमें ऐसे गण, कुल, शाखाके नाम नही है, जे मथुरांके शिला लेखोंके साथ मिलते आवे. इससे यह निसंदेह सिद्ध होता है, कि मथुरांके शिला लेखोंमें सर्व गण, कुल शाखा, आचार्योंके नाम श्वेतांबरोंके है, तो फेर तुमारे देवनसेनाचार्यनें जो दर्शन सार ग्रंथमें यह गाथा लिखीहैकि छत्तीस वाससए, विक्कम निवस्स, मरण पत्तस्स, सोरठे वल्लहीए, सेवर संघस मुपन्नो ॥ १ ॥

अर्थ. विक्रमादित्य राजाके मरा एकसौ छत्तीस १३६ वर्ष पीछे सोरठ देशकी वल्लभी नगरीमें श्वेतपट (श्वेतांबर संघ उत्पन्न हुआ) यह कहनां क्योंकर सत्य होवेगा, इस वास्ते इन शिला

लेखोंसें तुमारा मत पीछेसें निकला सिद्ध होता है, इस वास्ते श्री विरात् ६०९ वर्ष पिछे दिगंबर मतोत्पत्ति, इस वाक्यसें श्वेतांवरोका कथन सत्य मालुम होता है, और अधुनक मतवाले लुंपक, ढुंढक, तेरापंथी वगेरे मतोंवालोंसेंभी हम मित्रतासें विनती करते हैके तुमभी जरा इन लेखोंको वांचके विचार करोके श्री महावीरजीकी प्रतिमा के ऊपर जो राजा वासुदेवका संवत् ९८ अगानवेका लिखा हुआहै, और एक श्री महावीरजी की प्रतिमाको पलांठी ऊपर राजा विक्रमसें पहिले हो गए किसी राजेका संवत् विसका लिखा हुआहै, और इन प्रतिमाके वनवनेवाले श्रावक श्राविकांके नाम लिखे हुएहै और दश पूर्वधारी आचार्योंके समयके आचार्योंके नाम लखे हुएहै ॥ जिनोंने इन प्रतिमाकी प्रतिष्टा करी है; तो फेर

तुम लोक शास्त्रांके अर्थ तो जिनप्रतिमाके अधिकारमें स्वकल्पनासें जूठे करके जिन प्रतिमाकी उडापना करतेहो, परंतु यह शिला लेख तो तुमारेसें कदापि जूठे नही कहे जाएंगे, क्योंके इन शिला लेखोंकों सर्व यूरोपीयन अंग्रेज सर्व विद्वानोने सत्य करके मानेहै, इस वास्ते मानुष्य जन्म फेर पाना दुर्लजहै, और थोमे दिनकी जिंदगीहै, इस वास्ते पक्षपात गेमके तुम सच्चा धर्म तप गडादि गडोंका मानो, और स्वकपोल कल्पित बाविस २२ टोलेका पंथ और तेरापंथीयोंका मत गेम देवो, यह हित शिक्षा मैं आपकों अपने प्रिय बंधव मानके लिखी है. ॥

प्र. १५०—हमारे सुननेमें ऐसा आया है कि जैनमतमें जो प्रमाण अंगुल (जरत चक्रीका अंगुल) सो उत्सेधांगुल (महावीरस्वामीका आधा-

अंगुल)सें चारसो गुणा अधिक है, इस वास्ते उत्सेधांगुलके योजनसें प्रमाणांगुलका योजन चारसौ गुणा अधिक है, ऐसे प्रमाण योजनसें ऋषभदेवकी विनीता नगरी लांबी बारां योजन और चौमी नव योजन प्रमाणथी जब इन योजनाके उत्सेधांगुलके प्रमाणसें कोस करीये, तब १४४०० चौद हजार चारसौ कोस विनीता चौमी और १९२०० कोस लंबी सिद्ध होती है, जब एक नगरी विनिता इतनी वमी सिद्ध हूइ, तबतो अमेरिका, अफरीका, रूस, चीन, हिंदुस्तान प्रमुख सर्व देशोंमें एकही नगरी हूइ, और कितनेक तो चारसौ गुणेसेंजी संतोष नही पातेहै, तो एक हजार गुणा उत्सेध योजनसें प्रमाण योजन मानते है, तब तो विनाता ३६००० हजार कोस चौमी और ४८००० हजार कोस लांबी सिद्ध होती है, इस

कालके लोकतो इस कथनको एक मोटी गप्प स मान समझेंगे, इस वास्ते आपसें यह प्रश्न पूछते है कि जैनमतके शास्त्र मुजब आप कितना बडा प्रमाण अंगुलका योजन मानतेहो ?

उ. जैनमतके शास्त्र प्रमाणे तो विनीता नगरी और द्वारकाका मापा और सर्व द्वीप, समुद्र, नरक, विमान, पर्वत प्रमुखका मापा जिस प्रमाण योजनसें कहाहै सो प्रमाण योजन उत्सेधांगुलके योजनसें दश गुणा और श्रीमहावीरस्वामीके हाथ प्रमाणसें दो हजार धनुषके एक कोस समान (श्री महावीरस्वामीके मापेसें सवा योजन) पांच कोस जो क्षेत्र होवे सो प्रमाण योजन एक होता है, ऐसे प्रमाण योजनसें पूर्वोक्त विनीता जंबू द्वीपादिका मापा है, इस हिसाबसें विनीता द्वारकादि नगरीयां श्री महावीरके प्रमा

एके कोस चौमीयां ४५ पैतालीस कोस और लंबीया साठकोस प्रमाण सिद्ध होतीयां है इतनी वमी नगरीको कोइन्नी बुद्धिमान् गप्प नही कह सकताहै, क्योंकि पीछले कालमें कनोज नगरीमें ३०००० तीस हजार डुकानो तो पान वेचनेवालों की थी, ऐसे इतिहास लिखनेवाले लिखतेहै तो, सो नगर वहुत वमा होनां चाहिए, अन्यन्नी इस कालमें पैकिन लंदन प्रमुख वमेवमे नगर सुने जातेहै सो चौथे तीसरे आरेके नगर इनसें अधिक वमे होवे तो क्या आश्चर्य है, और जो चारसौ गुणा तथा एक हजार गुणा नत्सेधांगुलके योजनसें प्रमाणांगुलका योजन मानतेहै, वै शास्त्रके मतसें नहीहै, जो श्री अनुयोगद्धार सूत्रके मूल पाठमें ऐसा पाठ है, नत्सेधांगुलसें सहस्स गुणं परमाणंगुलं न्नवति इस पाठका यह अन्नि-

आयहै, कि एक प्रमाणांगुल उत्सेधांगुलसें चारसौ गुणीतो लांबी है, और अढाइ उत्सेधांगुल प्रमाण चौडी है, और एक उत्सेधांगुल प्रमाण जाडी [मोटी] है, इस प्रमाण अंगुलके जब उत्सेधांगुल प्रमाण सूची करीये तब प्रमाणांगुलके तीन टुकडे करीये, तब एक टुकडा एक उत्सेधांगुल प्रमाण चौडा और एक उत्सेधांगुल प्रमाण जाडा (मोटा) और चारसौ उत्सेधांगुलका लंबा होता है, ऐसाही दूसरा टुकडा होता है, और तीसरा टुकडा एक उत्सेधांगुल प्रमाण चौडा और इत-नाही जाडा (मोटा) और दोसो उत्सेधांगुल प्र-माण लंबा होता है, अब इन तीनों टुकडोंकों क्रमसें जोडीये तब एक उत्सेधांगुल प्रमाण चोडी और एक उत्सेधांगुल प्रमाण जाडी (मोटी) और एक हजार उत्सेधांगल प्रमाण लांबी सूची होती

है, अनुयोगद्वारमें जो मूल पाठ हजार गुणी कहता है, सो इस पुर्वोक्त सूचीको अपेक्षासें कहता है, परंतु प्रमाणांगुलका स्वरूप नही है, प्रमाणां जैसी ऊपर चारसौ गुणी लिख आएहै तैसी है, इस चारसौ गुणी प्रमाणांगुलसें ऋषभदेव भरतकी अवगाहनादिका मापा है, परंतु विनीता, द्वारकां, पृथ्वी, पर्वत, विमान, द्वीप, सागरोंका मापा हजार गुणी वा चारसौ गुणी अंगुलसें नही है, इन नगरी द्वीपादिकका मापा तो प्रमाणांगुल अढाइ उत्सेधांगुल प्रमाण चौडी है तिससें मापा करा है, यह जैनमतके सिद्धांतकारोका मत है, परंतु चारसौ तथा एक हजार गुण उत्सेधांगुलसें विनीता, द्वारकां, द्वीप, सागर, विमान, पर्वतोका मापा करनां यह जैन सिद्धांतका मत नही है, यह कथन जिनदास गणि क्षमाश्रमणजी श्री

अनुयोगद्वारकी चूर्णिमें लिखते है, तथा च चूर्णिका पाठः जेअपमाणंगुलाउपुढवायपमाणाआणिज्जंति तेअपमाणंगुलविस्कंभेणआणेयव्वानपुण सूइ अंगुलेणंतिएयंचविवत्तगुणएणाकेइएअस्सजंपुणमिणंतिअन्नेउसूइअंगुलमाणेणानसुत्तभणियंतं ॥ इस पाठकी भाषा ॥ जिस प्रमाणांगुलसें पृथ्वी, पर्वत द्वीपादिका प्रमाण करीये है सो प्रमाणांगुलका जो विस्कंभ (चौमापणा) अढाइ उत्सेध आंगुल प्रमाणसें करनां, परंतु सूची आंगुलसें पृथ्वी आदिकका प्रमाण न करनां, और कितनेक ऐसें कहते है कि एक प्रमाणांगुलमें एक हजार उत्सेधांगुल मावे, ऐसें प्रमाणांगुलसें मापनां, और अन्य आचार्य ऐसें कहता है कि उत्सेधांगुलसें चारसौ गुणी ऐसें प्रमाणांगुलसें पृथ्वी आदिकका मापा करनां, अब चूर्णिकार कहता है कि ये दोनो मत

हजार गुणी अंगुल और चारसौ गुणी अंगुलके मापेसें पृथ्वी आदिकके मापनेके मत, सूत्र प्रमाणित नही (सिद्धांत सम्मत नही)है, और अंगुल सत्तरी प्रकरणके कर्त्ता श्री मुनिचंद्र सूरिजी(जो के विक्रम संवत् ११६१ मे विद्यमान थे)इन पूर्वोक्त दोनो मतोंको दूषण देतेहै तथाच तत्पाठः ॥ किंचमयेसुदोसुविमगहंगकलिंगमाइआ सव्वेपायेणारियदेसाएगंमियजोयणेहुंति ॥ १६ ॥ गाथा इसकी व्याख्या ॥ जेकर ऐसें मानीयेंके एक प्रमाण अंगुलमें एक सहस्र उत्सेधांगुल अथवा चारसौ उत्सेधांगुल मावे, ऐसे योजनोंसें पृथ्वी आदिक मापीए, तवतो प्रायें मगधदेश, अंगदेश, कलिंगदेशादि सर्व आर्य देश, एकही योजनमें मा जावेंगे, इस वास्ते दशगुणे उत्सेधांगुलके विष्कंभपणेसें मापना सत्य है, इस चर्चासें अधिक

पांचसौ धनुषकी आवगाहना वाले लोक इस गे टेसें प्रमाणवाली नगरीमें क्योंकर मावेंगे, और द्वारकांके करोडों घर कैसें मावेंगें, और चक्रवर्त्ती के ठानवे ९६ करोड गाम इस छोटेसे नरतखंममें क्योंकर वसेंगे, इनके उत्तर अंगुलसत्तरीमें बहूत अछीतरेसें दीने है, सो अंगुलसत्तरी वांचके देखनां; चिंता पूर्वोक्त नही करनी, यह मेरा इस प्रश्नोत्तरका लेख बुद्धिमानोंकों तो संतोषकारक होवेगा, और असत् रूढीके माननेवालोंकों अचंभा जनक होवेगा, इसी तरे अन्यन्नी जैनमतकी कितनीक बाते असतरूढीसें शास्त्रसें जो विरूद्ध है, सो मान रक्खी है, तिनका स्वरूप इहां नही लिखते है.

प्र. १५९—गुरु कितने प्रकारके किस किस कीउपमा समान और रूप १ उपदेश २ क्रिया

३ कैसी और कैसेके पासों धर्मोपदेश नही सुननां, और किस पासों सुननां चाहिये.

उ.–इस प्रश्नका उत्तर संपूर्ण नीचे मुजब समझ लेनां.

एक गुरु चास (नीलचास) पक्षी समान है १

जैसें चाष पक्षीमें रूप है, पांच वर्ण सुंदर होनेसें और शकुनमेंभी देखने लायक है ? परंतु उपदेश (वचन) सुंदर नही है, २ कीडे आदिकें खानेसें क्रिया (चाल) अछी नही है ३ तैसेही कितनेक गुरु नामधारीयोमें रूप (वेष) तो सुविहित साधुका है १ परं अशुद्ध (उत्सूत्र) प्ररूपनेसें उपदेश शुद्ध नही २ और क्रिया मूलोत्तर गुण रूप नही

है, प्रमादसें निरवद्याहारादि नही गवेषण करते है ३ यदुक्तं ॥ दगपाणपुप्फफलंअणेसणिज्जं गिहत्थकिच्चाइंअजयापडिसेवतिजइवेसविडंवगानरं॥ १ ॥ इत्यादि ॥ अस्यार्थः ॥ सचित पाणी, फूल, फल, अनेषणीय आहार ग्रहस्थके कर्त्तव्य जिवहिसा १ असत्य २ चोरी ३ मैथुन ४ परिग्रह ५ रात्रिभोजन स्नानादि असंयमी प्रति सेवतेहै, वेभी गृहस्थ तुल्यही है, परंतु यतिके वेषकी विटंबना करनेसें इस वातसें अधिक है, ऐसे तो संप्रति कालमें दुःखम आरेके प्रभावसें वहूत है, परंतु तिनके नाम नही लिखते है, अतीत कालमेंतो ऐसे कुलवालादिकोंके दृष्टांत जान लेने, कुलवालकमें सुविहित यतिका वेषतो था, १ परं मागधिक गणिकाके साथ मैथुन करनेमें आशक्त था, इसवास्ते अच्छी क्रिया नहीथी २ और विशालाभंगादि म-

हा आरंभा दिकाप्रवर्त्तक होनेसें उपदेशभिशुद्धनही था, सामान्य साधु होनेसें वा उपदेशका तिसकों अधिकार नही था, ३ ऐसेही महाव्रतादि रहित १ उत्सूत्र प्ररूपक (गुरु कुलवास त्यागी) सो कदापि शुद्ध मार्ग नही प्ररूप शक्ताहै २ निकेवल यति वेषधारक है, ३ इति प्रथमो गुरु भेद स्वरुप कथनं ॥ १ ॥

दूसरा गुरु क्रौंच पक्षी समान है २

क्रौंचपक्षीमें सुंदर रूप नही है देखने योग्य वर्णादिक अभावसें १ क्रियाभी अच्छी नही, कीडे आदिकोके भक्षण करनेसें २ केवल उपदेश (मधुर ध्वनि रूप) है ३ ऐसेही कितनेक गुरुयोंमें रूप नही. चारित्रिये साधु समान वेषके अभाव सें १ सत क्रियाभी नही, महाव्रत रहित और

प्रमादके सेवनेसें २ परंतु उपदेश शुद्ध मार्ग प्ररू
पण रूप है ३ प्रमादसें पडे और परिव्राजकके
वेषधारी ऋषभ तीर्थंकरके पोते मरीच्यादिवत्
अथवा पासत्थे आदिवत् क्योंकि पासत्थेमें साधु
समान क्रिया तो नही है १ और प्रायें सुविहित
साधु समान वेषभी नही, यदुक्तं॥ वत्थुपम्मि
हियमपाणसकम्मिअंडकूलाई इत्यादि॥ अर्थः—वस्त्र
उन्नति लेखित प्रमाण रहित सदशाक पत्तेवभी र-
खनेसें सुविहितका वेष नही २ परं शुद्ध प्ररूपक
है, एक यथाछंदेको वर्जके पासत्था १ अवसन्ना २
कुशील ३ संसक्त ४ ये चारों शुद्ध प्ररुपक होस-
क्तेहै, परंतु दिन प्रतिदश जणोका प्रतिबोधक नं-
दिषेणसरीषे इस भांगेमें न जानने, क्योंके नं-
दिषेणके श्रावकका लिंग था ॥ इति दुसरा गुरु
स्वरूप भेद ॥ २ ॥

तीसरा गुरु भ्रमर समान है. ३

भ्रमरमें सुंदर रुप नही, कृष्ण वर्ण होनेसें १ उपदेश (तिसका उदात्त मधुर स्वर) नही है २ केवल क्रियाहै उत्तम फूलोंमेंसें फूलोंकों विना डुख देनेसे तिनका परिमल पीनेसें ३ तैसेही कितनेक गुरू यतिके वेषवालेज्ञी नहीहै १ और उपदेशक भी नही है २ परंतु क्रिया है, जैसें प्रत्येक बुद्धा दिकोंमें प्रत्येकबुद्ध, स्वयंबुद्ध तीर्थंकरादि यद्यपि साधुतो है, परंतु तीर्थगत साधुयोंके साथ प्रवच न १ लिंगसें साधार्मिक नहीहै, इस वास्ते यति वेषज्ञी नही १ उपदेशकज्ञी नही २ " देशनाऽना सेवकः प्रत्येकबुद्धादि रित्यागमात्" क्रियातो है, क्योंकि तिस ज्ञवसेंही मोक्ष फल होताहै ॥ इति तृतियो गुरु स्वरुप ज्ञेद ॥ ३ ॥

चोथा गुरु मोर समान है. ४

जैसें मोरमें रुपतो पंच वर्ण मनोहर १ और शब्द मधुर केकारुप है २ परं क्रिया नही है, सर्प्पादिकोंकोंन्नी नक्षण कर जाता है, निर्दय होनेसें ३ तैसें गुरुयों कितनेकमें वेष १ नपदेशतो है २ परंतु सत्क्रिया नही है, ३ मंग्वाचार्यवत् ॥ इति चौथा गुरु स्वरुप न्नेद ॥ ४ ॥

पांचमा गुरु कोकीला समान है. ५

कोकिलामें सुंदर नपदेश (शब्द) तो है, पंचम स्वर गानेसें १ और क्रिया आंबकी मांजरादि शुचि आहारके खाने रूपहै. तथा चाहुः॥ आहारे शुचिता, स्वरे मधुरता, नीमे निरारंन्नता ॥ वंधौ निर्ममता, वने रसिकता, वाचालता माधवे॥ त्यत्का तद्विज कोकिलं, मुनिवरं दूसरात्पुनर्दांन्निकं

वंदंते वत खंजनं, कृमि न्तुजं चित्रा गतिः कर्म णां ॥१॥ परंतु रुप नही काकादिसेंन्नी हीनरुप होनेसें ३ तैसेंही कितनेक गुरुयोंमें सम्यक् क्रिया १ नपदेश २ तोहै, परंतु (साधुका वेष) किसी हेतुसें नही है, सरस्वतीके छुमाने वास्ते यति वेष त्याग कालिकाचार्य वत् ॥ इति पांचमा गुरु स्वरुप न्नेद ॥ ५ ॥

छठा गुरु हंस समान है. ६

हंसमे रुप प्रसिद्ध है १ क्रिया कमल नाला दि आहार करनेसें अछीहै २ परंतु हंसमें नपदेश (मधुर स्वर) पिक शुकादिवत् नही है ३ तैसेंही कितने एक गुरुयोंमें साधुकावेष १ सम्यक् क्रि-यातो है २ परंतु नपदेश नही, गुरुने नपदेशक-रनेकी आज्ञा नही दीनी है, अनधिकारी होनेसें

धन्यशालिन्नाऽदि महा ऋषियोंवत् ॥ इति बठा गुरु स्वरुप भेद ॥ ६ ॥

सातमा गुरु पोपट (तोते) समान है. ७

तोता इहां बहुविध शास्त्र सूक्त कथादि परिज्ञान प्रागल्भ्यवान् ग्रहण करनां. तोता रूप करके रमणीय है १ क्रिया आंब कदली दाडिम फलादि शुचि आहार करता है. इस वास्ते अछी है. २ उपदेश वचन मधुरादि तोतेका प्रसिद्ध है ३ तैसे कितनेक गुरु वेष १ उपदेश २ सम्यक क्रिया. ३ तीनों करके संयुक्त है, श्रीजंबु श्रीवज्रस्वाम्यादिवत् इति सातमा गुरु स्वरूप भेद ॥ ७ ॥

आठमा गुरु काक समान है. ८

जैसे काकमें रूप सुंदर नही है १ उपदेशभी नही, कटुक शब्द बोलनेसें २ क्रियाभी अछी

नही है, रोगी, बूढे वलदादिकोंके आंखकाढलेनी चूंच रगमनी और जानवरोंका रुधिर मांस, मलादि अशुचि आहारीहोनेसें ३ ३ ऐसेंही कितनेक गुरुयोंमें रूप १ उपदेश २ क्रिया ३ तिनोंही नही है, अशुद्ध प्ररूपक संयम रहित पासत्थे आदी जानने, सर्व परतीर्थीकन्नी इसी नंगमे जानने ॥ इति आठमा गुरु स्वरूप नेद ॥ ८ ॥

इनमेसें उपदेश सुनने योग्यायोग्य कौन है.

इन आगेही नांगोंमें जो नंग क्रिया रहित (संयमरहित) है वे सर्व त्यागने योग्य है, और जो नंग सम्यक् क्रिया सहित है वे आदरने योग्य है, परंतु तिनमें नी जो उपदेश विकल नंगहै वे स्वतारकन्नी है, तोन्नी परकों नही तारसक्के है,

और जे लंग अशुद्धोपदेशक है, वेता अपनेकों और श्रोताकों संसार समुद्रमें डबोनेही वाले है, इस वास्ते सर्वथा त्यागने योग्य है, और शुद्धोप देशक, क्रियावान् पक्ष कोकिलाके दृष्टांत सूचित अंगीकार करने योग्य है ठीक योगवाला पक्ष तोतेके दृष्टांत सूचित सर्वसें उत्तमहै। और शुद्ध प्ररूपक पासछादि चारोंके पास उपदेश सुनना भी शुद्ध गुरुके अभावसें अपवादमें सम्मत है.

प्र. १६०–इस जगतमें धर्म कितने प्रकारके और कैसी उपमासें जानने चाहिये.

उ. इस प्रश्नोत्तरका स्वरुप नीचेके लिखे यंत्रसें जानना धर्म पांच प्रकारका है.

एक धर्म कं घेरी वन स मानहै, जैसं	इस वन समान नास्तिक मतियों का माना हुआ धर्म है सर्वथा थो- मासाभी शुभ फल नही देता है

कंथेरीवननिष्फल है. सर्वप्रकारसें केवल कांटो करके व्याप्तहोनेसें लोकांको विदारणादि अनर्थ जनक होता है, और तिस वनमे प्रवेशनिर्गमनभी दुष्कर है ॥१॥

और परभवमें नरकादि गतियोंमें दुख अनर्थकों देता है, और इस लोकमें लोक निंदा ! धिक्कार नृप दंडादिके भयसें इस कुकर्मी नास्तिक मतमें प्रवेश करना मुशकल है. और जो इस मतमें प्रवेश कर गये है, तिनकों स्व इच्छानुसार मद्य मांसादि भक्षण मात, बहिन. बेटीकी अपेक्षा रहित स्त्रीयोंसें भोगादि विषयके सुस्वादके सुखकी लंपटतासें तिस नास्तिक मतमेंसें निकलनाभी मुशकल है, इस वास्ते यह धर्म सर्वथा सुज्ञ जनोंको त्यागने योग्यहै, इस मतमें धर्मके लक्षणतो नहीहै, परंतु तिसके माननेवाले लोकोने धर्म मान रक्खा

है, इस वास्ते इसका नामभी धर्मही लिखाहै॥ इति प्रथम धर्म भेद ॥१॥

एकधर्मशाखी खेजड़ी बंबूल कीकर खदिर बेरीकरीरादि करके मिश्रित वन समानहै यह वन विशिष्ट शुभ फल नही देता है किंतु सांगरी बब्बूल फलादि सामान्य

इस वन समान बौद्धांका धर्म है. क्योंकि ब्रह्मचर्यादि कितनीक सत् क्रिया और ध्यान योगाभ्यासादिकके करनेसें मरां पीछे व्यंतर देवताकी गतिमें उत्पन्न होनेसें कुछक शुभ सुख रूप फल भोगमें देताहै, तथा चोक्तं बौद्ध शास्त्रे ॥मृद्वीशय्या प्रातरुत्थाय पेया॥ भक्तं मध्ये पानकंचा परान्हे॥ द्राक्षा पाणं शर्करामा ऽर्धरात्रौ॥ मोक्षश्चांते शाक्य पुत्रेण दृष्टः॥१॥ मणुन्न भोयणं, भुच्चा, मणुन्न सयणासणं मणुन्नं, सिअगारंसि मणुन्नं, झायए मुणी ॥२॥ इत्यादि॥ बौद्ध मतके शा

नीरसफल देतेहै, सांगरी पक्की शुष्क हुइ होइ किंचित् प्रथम खाते हूएमी ठी लगती है परंतु कंटकाकीर्ण होनेसें विदारणादि अनर्थका हेतु होवेहै ॥२॥

खानुसारे अपने शरीरकों पुष्टकरनां, मनके अनुकूल आहार शय्यादिकके जोगसें और वौद्धभिक्षुके पात्रमें कोइ मांस दे देवे तो तिसकोभी खा लेनां स्नानादिकके करनेसें पांचोइंद्रियोंके पोषनरूप और तप न करनेसें आदिमें तो मीठा (अच्छा) लगता है, परंतु भवांतरमें दुर्गति आदिक अनर्थ फल उत्पन्न करताहै, इस वास्तै यह धर्मभी त्यागने योग्य है॥ इति दूसरा धर्म भेद ॥ २ ॥

एक धर्म पर्वतके वनतथा जंगली वन

इस वन समान तापस १ नैयायिक वैशेषिक, जैमनीय, सांख्य, वैश्नवआदि आश्रित सर्व लौकिक धर्म और

समानहै,इस
वनमें थोहर,
कंथेरी कुम्मा
र प्रमुखके फ
ल देनेवालेवृ
क्षहै औरकं-
टकादिसें वि-
दारण करणे
सें अनर्थके-
त्नी जनकहै
१ औरकित-
नेक धव स
प्तकीके सुप-
लाश पनस
सी समादि वृ

चरक परिव्राजक इनके विचित्र पणे-
सें विचित्र प्रकारका फलहै सोइ दि-
खातेहै, कितनेक वेदोक्त महा यज्ञ,
पशुवधरूप स्नान होमादि करके धर्म
मानतेहै, वे कंथेरी वनवत् है. परन्न-
वमें अनर्थरूप जिनका प्राये फल हो-
वेगा. और कितनेक तो तुरमणीश
दत्तराजाकी तरे निकेवल नरकादि
फलवाले होते है । तथा चोक्तं आर-
ण्यके ॥ षवैइहयथा २ यज्ञेषुपशुन्निश
संतितेतथा २ इत्यादि ॥ तथाशुकसं-
वादे ॥यूपं छित्वा, पशून् हत्वा, कृत्वा
रुधिर कर्दमं, यद्येवं गम्यते स्वर्गे नर
के केन गम्यतेः ॥१॥ स्कंधपुराणे ॥
वृक्षां छित्वा, पशून् हत्वा, कृत्वा रु-

क्रहै, इनकेफ
लतो निःसा
रहै परंतु वि
शिष्ट अनर्थ
जनकनहीहै
२ और कित
नेक वेरी खे
जरूी खयरा
दि निःसार-
अशुभफलदेते
हैकंटकोंसें वि
दारणादि अ
निष्ठके जन-
कभीहोते है
३औरकितने

धिर कर्दमं, दग्ध्वा वन्हौ तिलाज्यादि
चित्रं,स्वर्गोभिलष्यते ॥ १ ॥कितनेक
अपात्रकों अशुद्ध दान गायत्र्यादिके
जापादि धव पलाशादिवत् प्राय फल
देनेवालेभी सामग्री विशेष मिले किं·
चित् फलजनकहै, परं अनर्थ जनक
नही, विवक्षितहै इस, स्थलमेंप्रतिदिन
लक्ष दान देनेवाला मरके हाथी हूए
सेठवत्, तथा दानशालादि करानेवाले
नंदमणिकारवत् श्रौर सेचनक हाथीके
जीव लक्ष भोजी ब्राह्मणवत् दृष्टांत
जानने ॥२॥ कितनेक तो सावद्य (स
पाप) अनुष्टान, तप, नियम दानादि
अन्यायसें द्रव्योपार्जन करी कुपात्रदा
नादि वेरी खेजरूीवत् किंचित् राज्या

क किंपाका-
दि वृक्ष है.
मुख मीठेप-
रिणाममें वि
रस फलके दे
नेवालेहै ४ कि
तनेक उंबर
(गूलर) वि-
ल्वादि फल
निःसारशुभ
फलवाले कं-
टकादिके अ
भावसें अन
र्थजनकनही
है ५ कितनेक

दि असार शुभ फल दुर्लभ बोधप-
णा हीन जातित्व परिणाम विरसादि
अनर्थभी देवेहै, कौणिक पिछले भ-
वमें तपस्वीवत् और जैनमति नाम
मिथ्यादृष्टी सुमढादि देव गतिमें गए
बहुल संसारी हूए. वे भी मिथ्या-
तप करनेमें तत्परहूए होए, इसी भंगमें
जानने ॥ ३ ॥ कितनेक किंपाकादिकी
तरें असत् आग्रह देव गुरुके प्रत्यनी-
कादि भाव वाले तथाविध तपोनुष्ठा-
नादि करके एकवार स्वर्गादि फल देके
बहुल संसार तिर्यंच नरकादिके दुख
देनेवाले होतेहै, गौशालक, जमालि
आदिवत् ॥४॥ तथा कितनेक भद्रभा
व विशेष पात्र गुणादि परिज्ञान रहि

नारिंग,जंबो
र, करणादि
मध्यम फल
के वृक्षहै,परं
तु अनर्थ ज
नक नहीहै ६
कितनेक रा-
यण (खिर-
णी) आंब,
प्रियंगु प्रमु-
ख सरस शु
भ पुष्प फल
वाले है, ये
सर्व मालकी
रहित जानने

त दान पूजादि मिथ्यात्वके रागसें करतेहै, वे उडुंबरादिवत् किंचित्राज्य मनुष्यके भोग समृध्यादि असार शुभ फलही देतेहै, दूसरेके उपरोधसें दान देनेवाले सुंदर वाणीयेकीतरें जैनधर्माश्रित भी निदान सहीत अविधिसें तप अनुष्ठान दानादि करनेवाले भी इसी भंगमें जान लेने, चंद्र, सूर्य बहुपुत्रिकादिके दृष्टांत जान लेने ॥ ५ ॥

कितनेक तापसादिधर्मी बहुत पाररहित तपोनुष्ठान कंदमूल फलादि सचित्त भोजन करनेवाले अल्प तपवाले नारंग, जंबीर, करणादि तरुवत् ज्योतिषि भवनपत्यादि त्रि मध्यम देवर्द्धि फलदायीहै. श्री वीर पिछले भवोंमें

७ एसं तार
तम्यतासें अ
धम, मध्यम
उत्तम वृक्षों-
की विचित्र-
तासें पर्वतके
वनोंकी भी
विचित्रताजा
ननी ॥ ३ ॥

परिव्राजक पूर्ण तापसवत् तथा जैन
मति सरोस गोरव प्रमाद संयमीआ
दि मंगुकी वध करनेवाले रूपक मुनि
मंगु आचार्यादिवत् ॥ ६ ॥ कितनेक
तामलि ऋषिकी तरें उग्र तप करने-
वाले चरक परिव्राजकादि धर्मवाले
आंबादि वृक्षोंवत् ब्रह्मदेवलोकावधि
सुख फल देतेहै ॥७॥ ये सर्व पर्वतके
वन समान कथन करे, परंतु सम्यग्
दृष्टीकों ये सर्व त्यागने योग्यहै ॥
इति तीसरा धर्म भेद ॥ ३ ॥

एक धर्म नृ
पवन समान
श्रावक धर्महै
राजके वनमें

इस वन समानश्राद्ध(श्रावक)धर्म
सम्यक्त्व पूर्वक बारांव्रताकी अपेक्षा
तरासौकरोड़ अधिक भेद होनेसें वि-
चित्र प्रकारका सम्यग् गुरु समीपे अं-

अंब, जंबू रा-
जादनादि ज
घन्य वृक्ष है
कला, नाली
केर, सोपारी
आदि मध्यम
माधवी लता
तमाल एला,
लवंग चंदना
गुरुतगरादय
उत्तम चंपक
राज चंपक
जाति पाढ-
लादि फूल त
रु विचित्र है,

गीकार करनेसें परिगृहीतहै, अज्ञान
मए लौकिक धर्मसें अधिकहै, और अ
तिचार विषय कषायादि चौर श्वाप-
दादिकोंसें सुरक्षितहै, और गुरु उप-
देश आगमाभ्यासादि करके सदा सु-
सिंच्य मानेहै, सौ धर्म देवलोककें
सुख जघन्य फल है, सुलभबोधि
होनेसें और निश्चित जलदी सिद्धि सु-
खांके देनेवाले होनेसें और मिथ्या-
त्वीके सुखास बहुत सुभग आनंदा
दि श्रावकोंकी तरें देतेहै, और उत्क-
र्षसें तो जीर्ण सेठादिकी तरें बारमे
अच्युत देवलोकके सुख देतेहे ॥ इस
वास्ते बारांव्रत रूप श्राद्ध (श्रावक)
धर्म यत्नसें अंगीकार गृहस्थ लोकोने

ये सर्व गिरि वनके वृक्षोंसें सींचे, पाले हुए होनेसें अधिक फल, पत्र पुष्पवाले है, सदा सरस बहु मोले फलादि देते है ॥ ४ ॥

करनां, और अधिक अधिक शुद्धभावोंसें पालनां आराधनां चाहिये ॥ इति चौथा धर्म भेद ॥ ४ ॥

एक धर्म देवताके वन समान साधु धर्म है, देवताके वनमें देव

इस वन समान चारित्र धर्मकी पुलाक बकुश कुशील निर्ग्रंथ स्नातकादि विचित्र भेदमय है, विराधक भावक साधुयोंका धर्म तीसरे मिथ्यात्व धर्ममें ग्रह करनेसें इस धर्ममें अवि-

तायोंकी तारताम्यतासें ऋद्धि मानोके क्रीडा करनेके नंदन वनादि मन्नी राजा-वनवत् जघन्य मध्यम उत्तमवृक्ष होतेहै, सब ऋतुके फलवान् वृक्षोंके होनेसें और देवताके प्रभावसें सर्व रोग

राधक यति धर्मवाले जाननें, तिनकों जघन्य सौधर्म देवलोकके सुखरूप फलहै. आराधिक श्रावक धर्मवालेसें अधिक और बारा कल्प देवलोक, नव ग्रैवेयकादि मध्यम सुख और उत्कृष्टतो अनुत्तर विमानके सुख संसारिक और संसारातीत मोक्ष फल देतेहै, इस वास्ते यह धर्म सर्व शक्तिसें उत्तरोत्तर अधिक अधिक आराधना चाहिये, यह सर्व धर्मोंसें उत्तम धर्म है, यह कथन उपदेश रत्नाकरमें किंचित् लिखाहै ॥

विषादि दूर
करें. मनचिं-
तित रूप क-
रण जरा प-
लित नाशक
इत्यादि बहु
प्रभाव वाली
ओषधीयांपत्र
फलादिकरके
संयुक्तहै पि-
छले सर्व व-
नोसें यह प्र-
धान वन है॥ इति पाचमा धर्म भेद ॥ ५ ॥

प्र. १६१–जो जैनमतमें राजे जैनधर्मी होते होवेंगे, वे जैनधर्म क्योंकर पाल शक्ते होवेंगें, क्योंकि जैनधर्म राज्यधर्मका विरोधी हमकों मालुम होताहै.

उ–गृहस्थावस्थाका जैनधर्म राज्यधर्म (राज्यनीति) का विरोधी नही है. क्योंकि राज्यधर्म चौर यार खूनी असत्यन्नापी प्रमुखाकों कायदे मूजब दंम देनाहै. इस राज्यनीतिका जैनराजाके प्रथम स्थूल जीवहिंसा रूप वृतका विरोध नही है, क्योंकि प्रथम व्रतमें निरपराधिकों नही मारना ऐसा त्याग है, और चौर यार खूनी असत्य न्नापी आदिक अन्याय करनेवालेतो राजाके अपराधि है, इस वास्ते तिनके यथार्थ दंम देनेसें जैन धर्मी राजाका प्रथम व्रत न्नंग नही होताहै, इसी तरें अपने अपराधि राजाके साथ लमाइ करनेसें

भी व्रत भंग नही होताहै. चेटक महाराजसंप्रति कुमारपालादिवत्, और जैनधर्मी राजे बारांव्रतरूप गृहस्थका धर्म बहुत अछी तरेसें पालते थे, जैसें राजा कुमारपालने पाले.

प्र. १६४—कुमारपाल राजाने बारांव्रत किस तरेंके करे और पाले थे.

उ.—श्री कुमारपाल राजाके श्री सम्यक्त मूल बारांव्रत पालनके थे ॥ त्रिकाल जिन पूजा १ अष्टमी चतुर्दशीमें पोषधोपवासके पारणेमें जो देखनेमें कोइ पुरुष आया तिसकों यथार्थ वृत्ति दान देकर संतोष करनां २ और जो कुमारपालके साथ पोषध करते थे तिनको अपने आवासमें पारणा करानां ३ टूटे हुए साधर्मिकका उद्धार करनां, एक हजार दीनार देना ४ एक वर्षमें साधर्मियोंकों एककरोम दीनार देने, ऐसें चौदह वर्ष

में चौदह करोम दीनार दीने ५ अठानवे लाख ए८ रूपक उचित दानमें दीने, वहत्तर ७२ लक्ष रूपक द्रव्यके पत्र निसंतान रोनेवालीके फामे ७ इक्कीस २१ कोश (ज्ञानभंमार) लिखवाए ८ नित्य प्रतें श्री त्रिभुवनपाल विहार (जो कुमारपालने ठान वे ए६ करोम रूपकके खरचसें जिन मंदिर बनवाया था) तिसमें स्नात्रोत्सव करनां ए श्री हेमचंद्रसूरिके चरणोंमे द्वादशावर्त्त वंदन करनां १० पीछे क्रमसें सर्व साधुयोंकों वंदन करनां ११ जिस श्रावकने पहिलां पोषधादि व्रत करे होवे तिसको वंदन, मान, दानादि करनां १२ अठारह देशोमे अमारीपटह कराया १३ न्याय घंटा वजानां १४ और अठारह देशोके सिवाय अन्य चौदह देशोमें धनवलसें मैत्रीवलसें जीव रक्षाका कराना १५ चौदहसौ चौनालीस १४४४ नवीन जिन मंदिर

वनवाए १६ सोलसौ १६०० जीर्ण जिन मंदिरो-
का उद्धार कराया १७ सातवार तीर्थ यात्रा करी
१८ ऐसे अम्यक्तकी आराधना करी ॥ पहिले वृ-
तमे सपराधी विना मारो ऐसे शब्दके कहनेसे
एक उपवास करनां १ दूसरे व्रतमें जलसें जुठ
बोला जावे तो आचाम्लादि तप करना २ तीसरे
व्रतमें निसंतान मरेका धन नही लेनां ३ चौथे
व्रतमें जैनी हुआ पीछे विवाह करणेका त्याग और
चौमासेके चार मास त्रिधा शील पालनां, मनसें
भंगे एक उपवास करनां वचनसे भंगे एकाचा-
म्ल, कायसें भंगे एकाशन. एक परनारी सहोदर
विरुद धरनां भोपलदेवी आदि आठों राणीयोंके
मरे पीछे प्रधानादिकोंके आग्रहसेंभी विवाह क-
रनां नही, ऐसा नियम भंग नही करा. आरात्रि
कार्थ सोनेमयि भोपलदेवीकी मूर्त्ति करवाइ; श्री

हेमचंद्रसूरिजीए वासक्षेप पूर्वक राजर्षि विरुद दीना ४ पांचमे वृतमें ० करोडका सोना, आठ करोमका रूपा, हजार तुला प्रमाण महर्घ्य मणिरत्न, बत्तीस हजार मण घृत, बत्तीस हजार मण तेल, लक्षा शालि चने, जुवार, मूंग प्रमुख धान्योंके मूंढक रक्खे पांच लाख ५००००० अश्व, पांचहजार ५०००, हाथी, पांचसौ ५०० ऊंट, घर, हाट, सन्नायान पात्र गामे वाहिनीये सर्व अलग अलग पांचसौ पांचसौ रक्खे. इग्यारेसो हाथी ११००, पंचास हजार ५०००० संग्रामी रथ, इग्यारे लाख ११००००० घोमे; अठारह लाख १८००००० सुभट. ऐसें सर्व सैनका मेल रक्खा. ५ छठे वृतमें वर्षाकालमें पट्टनके परिसरसें अधिक नही जाना ६ सातमें भोगोपभोग वृतमें मद्य, मांस, मधु, म्रक्षण, बहुवीज पंचोडुं वरफल, अभक्ष, अनंतका

य, घृत पूरादि नियम देवताके विनां दीना वस्त्र, फल आहारादि नही लेनां. सचित्त वस्तुमें एक पानकी जाति तिसके बीडे आठ; रात्रिमें चारों आहारका त्याग. वर्षाकालमें एक घृत विकृती लेनी, हरित शाक सर्वका त्याग. सदा एकाशनक करनां, पर्वके दिन अब्रह्मचर्य सर्व सचित विगय-का त्याग ७ आठमें वृतमें सातों कुव्यसन अपने देशसें काढ देने, ८ नवमें वृतमे जघन्य काल सा-मायिक करनां, तिसके करे हुइ श्रीहेमचंद्रसूरिके विना अन्य जनसें बोलनां नही. दिनप्रते १२ प्र-काश योग शास्त्रके २० वीस वीतराग स्तोत्रके प-ढने ए. दशमें वृतमें चतुर्मासिमें शत्रू उपर चढाइ नही करनी १० पोषधोपवासमें रात्रिमें कायोत्स र्ग करनां, पोषधके पारणे सर्व पोषध करनेवालों कों भोजन करानां ११ अतिथी संविभाग वृतमें

दुखिये साधर्मि श्रावक लोकांका, ७२ लक्ष द्रव्य का कर छोड्नां, श्री हेमचंद्रसूरिके उत्तरनेकी धर्मशालामें जो मुखवस्त्रिकाका प्रतिलेखक साधार्मि कों ५०० पांचसौ घोडे और बारां गामका स्वामी करा, सर्व मुख वस्त्रिकाके प्रतिलेखकांकों. ५०० पांचसौ गाम दीने १२ इत्यादि अनेक प्रकारकी शुभकरणी विवेक शिरोमणि कुमारपाल राजाने करीथी. यह गुरु १ धर्म २ और कुमारपालके वृत्तांके स्वरूप उपदेश रत्नाकरसें लिखे है.

प्र. १६३—इस हिंदुस्थानमें जितने पंथचत्र रहेहै, वे प्रथम पीछे किस क्रमसें हूएहै, जैसें आपके जाननेमें होवे तैसे लिख दीजिये ?

उ.—प्रथम ऋषभदेवसें जैनधर्म चला१ पीछे सांख्यमत २ पीछे वैदिक कर्म कांडका ३ पीछे वे

दांत मत ४ पीछे पातंजलि मत ५ पीछे नैयायिक मत ६ पीछे बौद्धमत ७ पीछे वैशेषिक मत ८ पीछे शैव मत ए पीछे वामीयोंका मत १० पीछे रामानुज मत ११ पीछे मध्व १२ पीछे निंबार्क १३ पीछे कबीर मत १४ पीछे नानक मत १५ पीछे वल्लभ मत १६ पीछे दादुमत १७ पीछे रामानंदीयोंका मत १८ पीछे स्वामिनारायणका मत १ए पीछे ब्रह्म समाज मत २० पीछे आर्या समाज मत दयानंद सरस्वतीने स्थापन करा. २१ इस कथनमें जैनमतके शास्त्र १ वेदभाष्य २ दंत कथा ३ इतिहासके पुस्तकादिकोंका प्रमाण है ॥ इत्यलम् ॥ अहमदावादका वासी और पालणपुरमें न्यायाधीश राज्याधिकारी श्रावक गिरधरलाल हीराभाइ कृत कितनेक प्रश्न तिनके उत्तर पालिताणेमें चार प्रकार महा संघके समुदायने आ-

चार्य पद दत्त नाम विजयानंद सूरि अपर प्रसिद्ध नाम आत्माराम मुनि कृत समाप्त हुएहै ॥ इन सर्व प्रश्नोत्तरोंमें जो वचन जिनागम विरुद्ध भूल सें लिखा होवे तिसका मिथ्या दुःकृत देता हुं॥ सर्व सुज्ञ जन आगमानुसार सुधारके लिख दीजो, और मेरे कहे उत्सूत्रका अपराध माफ करजो॥ इति प्रश्नोत्तरावलि नाम ग्रंथ समाप्तम्.

(अथ गुरु प्रशस्तिः)

(अनुष्टुप् वृत्तम्–)

श्रीमद्वीर जिनेशस्य शिष्य रत्नेषु ह्युत्तमः
सुधर्म इति नाम्नाऽभूत् पंचमः गणभृत् सुधीः १
अयमेव तपागच्छ महाद्रोर्मूलमुच्चकैः

ज्ञेयः पौरस्त्यपट्टस्य भूषणं वाग्वि भूषणं १
परंपरायां तस्यासीत् शासनोत्तेजकः प्रधीः
श्रीमद्विजयसिंहाव्हः कर्मठः धर्म कर्मणि– ३
तस्य पट्टांबरे चंद्रः विजयः सत्यपूर्वकः
अभूत् श्रेष्ठ गुणग्रामैः संसेव्यः निखिलै र्जनैः ४
पट्टे तदीयके श्रीमत् कर्पूरविजयाभिधः
आसीत् सुयशाः ज्ञान क्रिया पात्रं सदोद्यमः ५
तत्पट्ट वंश मुक्तासु मणिरिवेप्सितप्रदः
सिद्धांत हेमनिकषः क्षमा विजय इत्यभूत् ६
जिनोत्तम पद्म रूप कीर्ति कस्तूर पूर्वकाः
विजयांता क्रमेणैते बभूवुर्बुद्धिसागराः ७
तस्य पट्टाकरे चिंता मणिरिवेप्सितप्रदः
मणिविजय नामाऽभूत् घोरेण तपसाकृशः ८
ततोऽभूत् बुद्धि विजयः बुद्ध्यष्टगुणगुम्फितः
प्रस्तुतस्या स्मदीयस्य गच्छवर्यस्य नायकः ९